मुक्त व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम

होम्योपैथिक वितरण

718-719

भाग 1-2

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

मुक्त व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम
कोर्स कोड : 718

होम्योपैथिक वितरण

1

होम्योपैथी का परिचय

पाठ्यक्रम समन्वयक
डा. ममता श्रीवास्तव
उपनिदेशक

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

© राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

जून, 2012 (पुनमुद्रित) 1,000 प्रतियाँ

सचिव, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, ए-24-25, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर 62, नोएडा, उ.प्र.-201309
द्वारा प्रकाशित तथा अभिनव प्रिन्ट्स, के-37, उद्योग नगर इण्डस्ट्रियल एरिया, रोहतक रोड, दिल्ली-110041

आभार

कोर्स पाठ्यक्रम समिति

डा. एस.पी.सिंह
सलाहकार, आयुष,
एम.एच.एफ.डब्लू
नई दिल्ली

डा. वी.के. खन्ना
आचार्य,
नेहरू होम्योपैथिक मेडिकल कालेज एवं अस्पताल, नई दिल्ली

डा. आर.के.मनचन्दा
उप निदेशक
नेहरू होम्योपैथिक मेडिकल कालेज एवं अस्पताल, नई दिल्ली

डा.एल. के प्रधान
रिटायर्ड प्रौफेसर
नैशनल इंस्टीट्यूट आफ होम्योपैथी
कोलकता

डा.बी.एस माथुर
रिटायर्ड प्रौफेसर
नेहरू होम्योपैथिक मेडिकल कालेज एवं अस्पताल, नई दिल्ली

श्री.ए.एस माथुर
निदेशक, व्यावसायिक शिक्षा
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, यू.पी.

डा. ममता श्रीवास्तव
सहा. निदेशक
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, यू.पी.

डा. सविता कौशल
शैक्षणिक अधिकारी
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, यू.पी.

पाठ लेखन

डा. गीतिका ग्रोवर
बी.एच.एम.एस(सी.यू), पी.जी.टी
नैशनल इंस्टीट्युट आफ होम्योपैथी,
कोलकता, वेस्ट बंगाल

डा. सुचेतन भट्टाचार्य
बी.एच.एम.एस(सी.यू) पी.जी.टी
नैशनल इंस्टीट्यूट ऑफ होम्योपैथी
कोलकत्ता (वेस्ट बंगाल)

डा. अयान रे
राजीव गाँधी ओपन इंस्टीट्यूट
सिलचर, (असम)

डा. रानेनद्र कार,
राजीव गाँधी ओपनं इंस्टीट्यूट
सिलचर, असम

पाठ्यक्रम संपादक

डा.एल.के. प्रधान
रिटायर्ड. प्रो., नैशनल इंस्टीट्यूट आफ होमियोपैथी, कलकत्ता
(वेस्ट बंगाल)

डा. एस.पी.सिंह
सलाहकार, आयूष,
एम.एच.एफ.डब्ल्यू
नई दिल्ली

ग्राफिक व कवर डिजाइन

श्री महेश शर्मा
ग्राफिक आर्टिस्ट
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नई दिल्ली

डॉटा प्रोसेसिंग एवं लेजर टाइप सेटिंग : कनिका प्रिंटर्स, नई दिल्ली – 9910837056

आपके लिए दो शब्द

प्रिय शिक्षार्थी,

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान में आपका स्वागत है।

इस संस्थान में दाखिला लेकर, आप विश्व की सबसे बड़ी मुक्त शिक्षा प्रणाली के परिवार का सदस्य बन गए हैं। इस संस्थान के व्यावसायिक कार्यक्रम के शिक्षार्थी के रूप में, मुझे विश्वास है कि आपको यह पाठ्यक्रम पढ़ने में आनंद आएगा और इस अनोखी विद्यालयी और शिक्षा विधि से आपको लाभ होगा।

इस कार्यक्रम को शुरू करने से पहले मैं आपको कुछ शिक्षा प्रणाली के बारे में सलाह देना चाहता हूँ। हम जानते हैं कि आप में से कई के पास जीवन के कई अनुभव होंगे, आपके पास अपने परिवार के व्यवसाय के कौशल के बारे में पहले से जानकारी होगी; आपके पास व्यवसाय के लिएं तेज़ दिमाग होगा जो आपको इच्छा व्यापारी बनाएगा। सबसे आवश्यक आपमें वह जोश और उत्साह है जिसके कारण आपने इस संस्था में दाखिला कराया।

इस कोर्स के दौरान, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान आपको अपनी पढ़ाई का सर्वेसर्वा समझेगा। यह पाठ्य सामग्री इस प्रकार बनाई गई है कि आपके लिए कोई शिक्षक नहीं होता है। आप स्वयं ही अपने शिक्षक हैं। परन्तु, अगर आपको कोई समस्या हो तो, प्रत्यायित व्यावसायिक संस्था (ए.वी.आई.) में आपके लिए शिक्षक की व्यवस्था होती है मेरी आपके लिए सलाह है कि आप ए.वी.आई. के संपर्क में रहें जिससे कि पाठ्य सामग्री, परीक्षा तिथि आदि ले सकें। आपको हमेशा व्यक्तिगत संपर्क कार्यक्रम (Personal Contact Programme) और प्रायोगिक/प्रशिक्षण में उपस्थित होना चाहिए। जो अध्ययन केन्द्र द्वारा चलाए जाते हैं। यह आपको प्रशिक्षण में मदद करेगा और व्यवसायिक कोर्स के लिए भी आवश्यक होगा।

व्यवसायिक पाठ्यक्रम का अध्ययन अन्य पाठ्यक्रमों से भिन्न हैं। यहाँ, परीक्षा में पाए अंक यह संकेत करेंगे कि आपकी विषय ज्ञान पर पकड़ कितनी है, परन्तु असली उपलब्धि तब होगी जब आप व्यवसायिक कौशल का बाज़ार में उपयोग कर पाएँगे। मुझे आशा है कि कौशल के द्वारा आपको अपने कार्य में बेहतर करने में सहायता मिलेगी। यह कोर्स " होमियोपैथिक वितरण में प्रमाण पत्र" न सिर्फ आपका ज्ञान बढ़ाएगा बल्कि आपको दवाई वितरण के कौशल में भी मदद करेगा, जो उतना ही जरूरी है जितना कि सही दवाई का नुस्खा लिखना। यह कोर्स आपको होमियोपैथी की दुनिया में प्रवेश करने के लिए तैयार करता है। एनआईओएस की ओर से मैं आपको सफल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ देता हूँ।

अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

होम्योपैथिक औषधि वितरण

1

होम्योपैथी का परिचय

विषय सूची

पाठ संख्या	पाठ	पृष्ठ संख्या
1.	शरीर संरचना शास्त्र के मूल सिद्धांत	1
2.	शरीर क्रिया विज्ञान के मूल सिद्धांत	21
3.	होम्योपैथी का इतिहास	48
4.	औषधि के ज्ञान – साधन	55
5.	होम्योपैथिक मैटीरिया मेडिका का परिचय	70

1

शरीर संरचना शास्त्र के मूल सिद्धांत

1.1 परिचय

मानव शरीर की रचना को समझने के लिए मानव शरीर-रचना शास्त्र को समझना जरूरी है। इस पाठ में हम शरीर-रचना शास्त्र के बारे में पढ़ेंगे।

अस्थियां : उनका वर्गीकरण, संरचना और क्रियाएं। त्वचा की बनावट और उनकी भिन्न क्रियाओं की भी चर्चा की गई है। तत्पश्चात् संक्षेप में मानव शरीर के विभिन्न प्रकार के अंगों का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

1.2 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के पश्चात, आप समझ पाएंगे :

- अस्थियों का क्षेत्रीय वर्गीकरण और संयोजन (कम्पोज़ीशन)
- अस्थियों की क्रियाएं
- आकार के अनुसार अस्थियों का वर्गीकरण
- बनावट या विकास के आधार पर अस्थियों का वर्गीकरण
- त्वचा की बनावट और क्रिया
- भिन्न अंगों का विवरण — ग्रासनली, उदर, ग्रहणी (duodenum), मध्यांत्र (Jejunum), इलियम (ileium), सीकम (caecum), एपेंडिक्स (appendix), बृहदान्त्र (colon), मलाशय, यकृत, पित्ताशय (gall-bladder), अग्न्याशय (pancreas), प्लीहा (spleen), गुर्दा (kidney), फेफड़े (lungs), हृदय, मस्तिष्क, गर्भाशय।

1.3 अस्थियां

कंकाल -- यह शरीर के ढांचे का मुख्य आधार होता है जो अस्थियों और उपास्थि (cartilages) से बना होता है।

अस्थि -- अस्थि एक सजीव ऊतक (टिशु) है, जिसमें अपनी संरचना (structure) को भिन्न प्रकार के दबाव के परिणामस्वरूप बदलने की क्षमता होती है।

अस्थियों का क्षेत्रीय वर्गीकरण

कंकाल के क्षेत्र	अस्थियों की संख्या
अक्षीय कंकाल (Axial skeleton)	
खोपड़ी/कपाल (skull)	
क्रेनियम (cranium)	8
चेहरा (face)	14
श्रवण अस्थिका (auditory cessicles)	6
कंठिका (hyoid)	1
कशेरुकाएं (vertebrae)	26
उरोस्थि (sternum)	1
पसलियां (ribs)	24
उपांगीय कंकाल	
अंसीय मेखला (shoulder girdle)	
जत्रुक (क्लेविकल)	2
स्कैपुला	2
उर्ध्वशाखाएं (upper extremeties)	
प्रगांडिका (humerus)	2
रेडियस (radius)	2
अंतः प्रकोष्ठिका (ulna)	2
मणिबंधिकाएं (carpals)	16
करभिका (metacarpals)	16
अंगुलियां (phalanges)	28

श्रोणि मेखला (Pelvic girdle)	
अनामी (श्रोणि) आस्थ	2
अधः शाखाएं (Lower extremeties)	
ऊर्विका (femur)	2
जान्विका (patella)	2
बहिर्जंघिका (fibula)	2
टिबिया (tibia)	2
गुल्क (tarsal)	14
प्रपदिका (metatarsal)	10
अंगुलियां (Phalanges)	28
	206

अस्थियों का संयोजन (Composition of Bones)

जैविक पदार्थ (Organic matter) : यह कोलेजन रेशों (collagen fibres) से बना होता है जो कुल भार का एक-तिहाई है तथा एक तंतुमय ढांचा उपलब्ध कराता है जिससे रुक्ष लचीलापन (rugged elasticity) उत्पन्न होता है ताकि अस्थियां अत्यंत मजबूत हो सकें।

अजैविक पदार्थ (Inorganic matter) : इसमें मुख्य रूप से कैलशियम फोसफेट तथा आंशिक रूप से कैलशियम कार्बोनेट एवं कैलशियम फ्लोराइड, कैलशियम क्लोराइड तथा मैगनीसियम लवण के अंश विद्यमान होते हैं। यह कुल भार का दो-तिहाई है व एक आधार उपलब्ध करता है जो कठोरता तथा सुगढ़ता प्रदान करता है।

अस्थियों के प्रकार्य (functions of Bones)

- अस्थियां शरीर को आकार व बल प्रदान करती हैं। ये शरीर के भार को भूमि पर प्रसारित करती हैं।
- अस्थियां पेशीय क्रियाओं के लिए उत्तोलक (लीवर) का कार्य करती हैं।
- खोपड़ी, कशेरुक दंड तथा वक्षीय पिंजर क्रमशः मस्तिष्क, मेरुरज्जु (spinal cord) तथा वक्षीय अंतरंग (thoracic viscera) को सुरक्षित रखता है।
- ये पेशियों, कण्डरा (tendons), स्नायु (ligaments), संपट्ट (fascia) तथा झिल्लियों की संबद्धता के लिए सतह उपलब्ध कराती हैं।
- अस्थि मज्जा (bone-marrow) रक्त कोशिकाओं का निर्माण करता है।

- ये जलिका अंतः स्तर तंत्र (reticular-endothelial system) के लिए स्थान उपलब्ध कराती हैं।
- अस्थियां कैलशियम तथा फासफोरस के भण्डारण के लिए उपयुक्त स्थान है।
- खोपड़ी (skull) की अस्थियों में बड़ा परानासिका वायु कोटर (paranasal air sinuses) आवाज़ की ध्वनि को प्रभावित करता है ।

अस्थियों का वर्गीकरण

अस्थियों को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है :

चित्र 1.1 युवा पुरुष का कंकाल : अग्रवर्ती दृश्य

(क) आकार के अनुसार

(i) **लम्बी अस्थियां :** प्रत्येक लम्बी अस्थि में एक दीर्घरूपक शाफ्ट तथा दो विस्तृत छोर होते

हैं जो चिकने तथा सन्धायक होते हैं। उदाहरण के लिए -- प्रगांडिका रेडियस अंतः प्रकोष्टिका, ऊर्विका, टिबिया तथा बहिर्जंधिका।

चित्र 1.2 बांया प्रगंडिका अग्रवर्ती पहलू

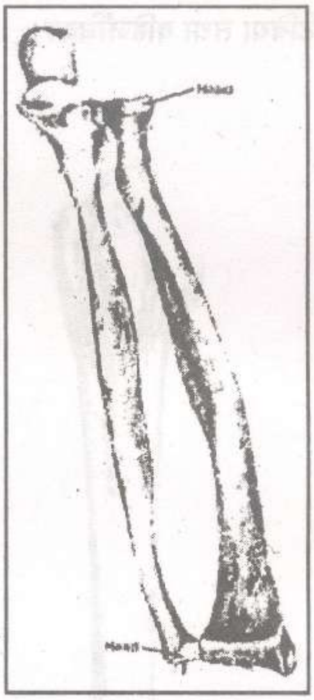

चित्र 1.3 बांयी अंतः प्रकोष्टिका, ऊर्विका, सामने से (अग्रपक्ष)

(ii) **छोटी अस्थियां** : जैसे मणिबंधिका (carpals) और गुल्फ (tarsal) अस्थियां।

चित्र 1.4 (क) बांए हाथ की अस्थियां करतल सतह

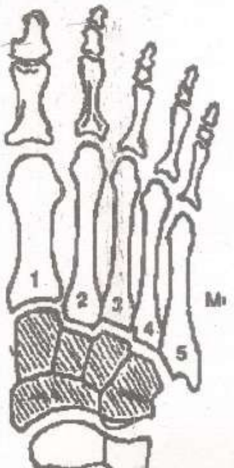

चित्र 1.4 (ख) पैर व पदांगुष्ठ के पृष्ठ

(iii) **वातीय अस्थियां** (Pneumatic) : विभिन्न खोपड़ी की अस्थियों में बड़ी वायु गुहाएं होती हैं। उदाहरण के लिए जंभिका (maxilla)। ये खोपड़ी (skull) को हलका बनाती हैं तथा वाणी के अनुनाद में सहायक होती हैं।

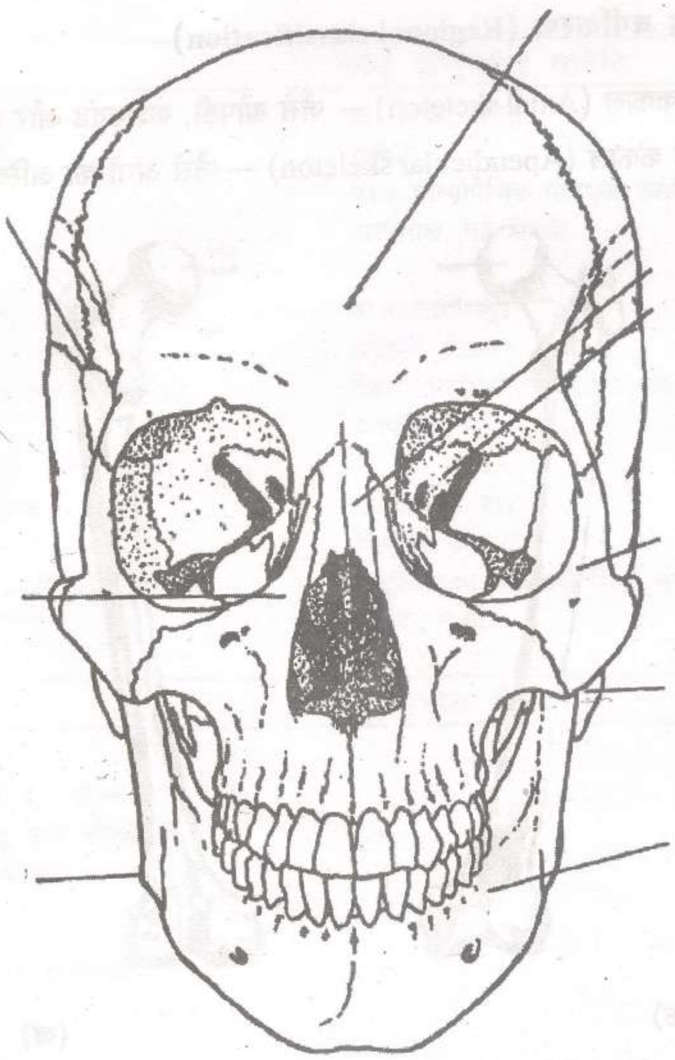

चित्र 1.5 करोटि : अग्रवर्ती भाग (नोर्मा फ्रंटैलिस)

(iv) **सपाट अस्थियां** (flat bones) : उथली प्लेटों के समान जैसे स्कैपुला, श्रोणि अस्थि का श्रोणि क्षेत्र, उरोस्थि पसलियां तथा अनेक खोपड़ी की अस्थियां।

(v) **अनियमित अस्थियां** -- जैसे कशेरुक (vertebrae)

(vi) **वर्तुलिका अस्थियां** (Sesamoid bones) -- ये अस्थियां बीज के समान होती हैं तथा नसों में विकसित होती हैं। जैसे जान्विका (patella) तथा गोलकास्थि (pisiform)

अस्थियां आदि। इनमें कोई पर्यास्थिकता (periosteum) नहीं होता और जन्म के बाद यह अस्थि (ossify) बन जाती है। यह दबाव को सहन करती है और घर्षण को न्यूनतम बनाती है।

(ख) क्षेत्रीय वर्गीकरण (Regional classification)

(i) अक्षीय कंकाल (Axial skeleton) -- जैसे खोपड़ी, कशेरुदंड और वक्षीय पिंजर

(ii) उपांगीय कंकाल (Apendicular skeleton) -- जैसे अंगों की अस्थियां

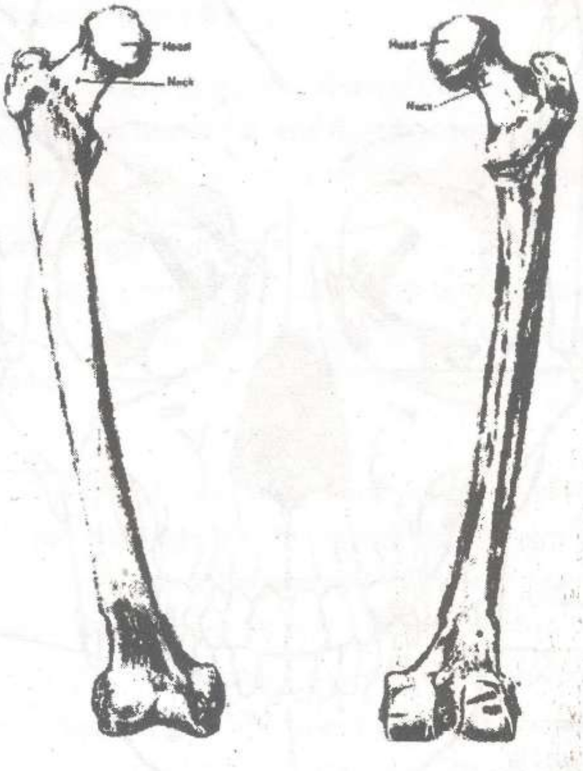

(क) (ख)

दायां उर्विका : (क) अग्र पक्ष (ख) पश्व पक्ष

(ग) विकासात्मक वर्गीकरण (Developmental Classification)

(i) **झिल्लीमय अस्थियां** (Membranous Bones) -- झिल्लियों में परिणत, जैसे खोपड़ी के वॉल्ट की अस्थियां तथा चेहरे की अस्थियां।

(ii) **उपास्थिय अस्थियां** (Crtilagenous Bones) -- उपास्थियों में परिणत, जैसे अंगों की अस्थियां।

(घ) संरचनागत वर्गीकरण (Structural Classification)

(i) सघन अस्थियां (compact bones) -- ये सघन हैं परन्तु अत्यन्त छिद्रिल (porous) हैं। इन्हें लम्बी अस्थियों के परिप्रेक्ष्य में बेहतर देखा जा सकता है।

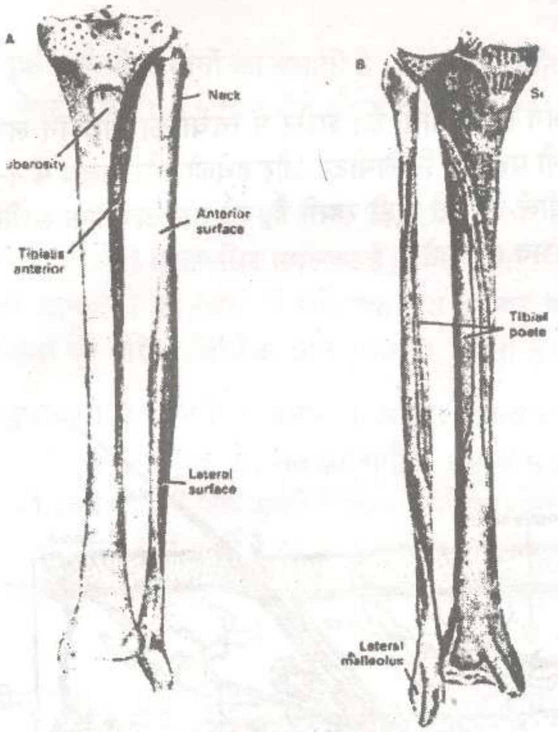

क. अग्र पक्ष   ख. पश्च पक्ष

चित्र 1.7 बांया बहिर्जंघिका (fibula)

(ii) स्पंजदार अस्थियां (cancellous or spongy bones) -- यह ट्रैबिक्युले (trabeculae) के जाली से बनी होती हैं, जिसके बीच में संकीर्ण जगह होती है, जैसे लम्बी अस्थियों के छोर में जगह, कशेरुल, उरोस्थि में आदि।

पाठगत प्रश्न 1.1

1. निम्न को मिलाइए

कंकाल का क्षेत्र	अस्थियों की संख्या
(क) चेहरा	1. 2
(ख) कंठिका	2. 26
(ग) स्कैपुला	3. 28

(घ)	अंतः प्रकोष्ठिका	4.	2
(ड.)	कशेरुका	5.	14
(च)	अंगुलियां	6.	1

2. अस्थियों के कोई दो प्रकार्य लिखिए।

1.4 त्वचा

शरीर का सबसे बड़ा अंग त्वचा होती है। शरीर में त्वचा का मोटापन लगभग 1.2 मिलिमीटर होता है। आंख की पुतली पर 0.5 मिलिमीटर और हथेली और तलवे में 4-6 मिलिमीटर। त्वचा निचली ऊतकों पर लचीले रेशों से जुड़ी रहती है, जो उसे अपेक्षिक लचीलापन देती है जिससे जोड़ों में स्वतंत्र गति संभव हो सके।

त्वचा की संरचना

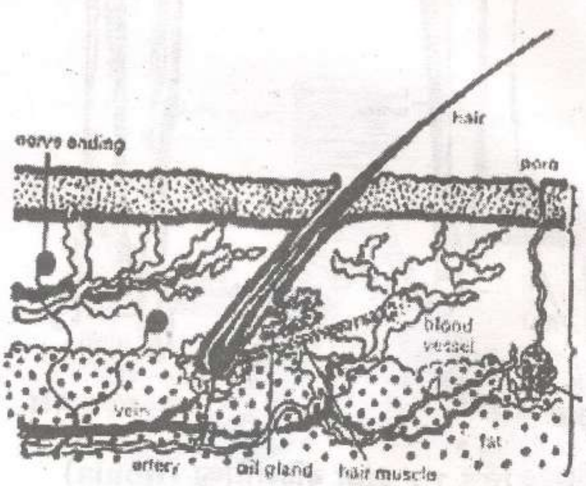

चित्र 1.8 : त्वचा और उपत्वचीय ऊतकों की संरचना

1. त्वचा की दो स्पष्ट सतह होती हैं --बाह्यत्वचा (epidermis) या बाहरी परत और चर्म (dermis) की गहरी परत।

2. बाह्यत्वचा एक केराटिन (keratin) की पतली सतह से आवरित है -- यह प्रोटीन पदार्थ बालों और नाखूनों में भी पाया जाता है।

3. चर्म के भीतर, उपत्वचा वसा परत के बिलकुल ऊपर, स्वेद ग्रंथियां पायी जाती हैं, जो स्वेद को छिद्रों एवं वाहिनी द्वारा संस्रावित करती हैं।

4. चर्म (dermis) में शिरा और रक्त कोशिकाएं भी पायी जाती हैं, जो बाह्यत्वचीय कोशिकाओं को पोषण प्रदान करती हैं।

5. बाल विशिष्ट बाह्यत्वचीय कोशिकाओं से उत्पन्न होते हैं, जो केश पुटक से बढ़ते हैं और चर्मीय सतह तक फैलते हैं। हर बाल की अपनी (erector musle) मांसपेशी और वसा ग्रंथियां (sebaceous glands) होती हैं जो वसा या तेल का निस्सरण करती हैं जो त्वचा को नमनशील बनाते हैं।

त्वचा के प्रकार्य :

1. यह शरीर के नाजुक आन्तरिक अंगों को बचाती है और क्षति, हानिकारक सूर्य किरणों और सूक्ष्म जीवों, बैक्टीरिया (bacteria) रोग संक्रमण के प्रति एक शारीरिक कवच का कार्य करती है।
2. यह एक ज्ञानेन्द्रीय (sensory organ) की तरह भी क्रिया करती है, जिसमें शरीर के अन्य भागों से अधिक मात्रा में शिरा-सिर उपलब्ध हैं। जिससे कि स्पर्श, पीड़ा, गर्म और ठंड के संवेदन की जानकारी को त्वचा से मस्तिष्क तक बराबर पहुंचाकर शरीर की अस्थियों के आसपास की परिस्थितियों के प्रति जागरुक करती हैं।
3. इसका शरीर के तापमान को नियंत्रित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है। 85 प्रतिशत गर्मी त्वचा के द्वारा कम होती है। जब यह गर्मी के सम्पर्क में आती हैं, तो त्वचीय सतह के करीब वाली रक्त वाहिनी फैल जाती हैं जिससे अधिक रक्त प्रवाह हो सके और गर्मी को कम कर सके। जब सर्दी होती है तो रक्त वाहिनी संकुचित हो जाती हैं जिससे त्वचीय सतह के नजदीक रक्त प्रवाह कम हो जाता है और ऊष्मता को यह अन्दर ही रोक लेती है।
4. त्वचा स्वेदन (पसीना) की विधि के द्वारा एक उत्सर्जित (एक्सक्रीशन) अंग की तरह कार्य करती है।
5. यह सूर्य की किरणों से विटामिन डी (VitD) और कुछ प्रतिपिण्ड (antibodies) बनाने में भी अपनी भूमिका अदा करती है।

संस्वेदन (Perspiration) :

संस्वेदन शब्द का प्रयोग उन दो विधियों का विवरण करने के लिए किया जाता है, जिसमें स्वेद ग्रंथियों का उत्पाद यानि कि स्वेद और वह विधि जिसमें यह द्रव्य बनता है।

स्वेद में लगभग 99 प्रतिशत पानी, कम मात्रा में नमक, यूरिया (urea) और अन्य अपशिष्ट पदार्थ होते हैं।

संस्वेदन विधि शारीरिक तापमान को नियंत्रित करती है क्योंकि स्वेद के वाष्पित होने से ऊष्मा निष्कर्षित होती है।

1.5 अंग (vescera)

गुहा के घेरे में आन्तरिक अंग, विशेष रूप से उदर संबंधित अंग।

I. उदर संबंधी अंग :

(i) यकृत (liver)
(ii) प्लीहा (spleen)
(iii) गुर्दे (kidney)
(iv) अग्न्याशय (pancreas)
(v) पित्ताशय (gall-bladder)
(vi) अमाशय (stomach)
(vii) ग्रहणी (duodenum)
(viii) मध्यांत्र (jejunum)
(ix) इलियम (Ileum)
(x) सीकम (caecum)
(xi) अपेंडिक्स (appendix)
(xii) चढ़ती हुई बृहदान्त्र (ascending colon)
(xiii) अनुप्रस्थ बृहदान्त्र (transverse colon)
(xiv) उतरती हुई बृहदान्त्र (descending colon)
(xv) महाधमनी (aorta)
(xvi) बाह्य इलिएक (Iliac) धमनी

II. गर्दन संबंधी अंग

(i) ग्रासनली (oesophagus)
(ii) गलग्रन्थि (Thyroid gland)
(iii) परावटु ग्रन्थि (Parathyroid gland)

III. वक्षीय गुहा (Thoracic cavity)

(i) हृदय
(ii) फेफड़े
(iii) महाधमनी का मेहराब (arch of aorta)
(iv) फुफ्फुस धड़ (Pulmonary Trunk)

IV. श्रोणि अंग

1. पुरुष में
   (i) मूत्राशय
   (ii) मूत्र वाहिनी (ureter)
   (iii) मलाशय (Rectum)
   (iv) सिग्मोयिड बृहदान्त्र (Sigmoid colon)

2. स्त्री में
   (i) मूत्राशय
   (ii) मूत्र वाहिनी
   (iii) गर्भाशय
   (iv) अंडाशय (ovaries)
   (v) मलाशय (rectum)
   (vi) सिगमोइड बृहदान्त्र (sigmoid colon)

V. खोपड़ी के अंग

(i) मस्तिष्क :

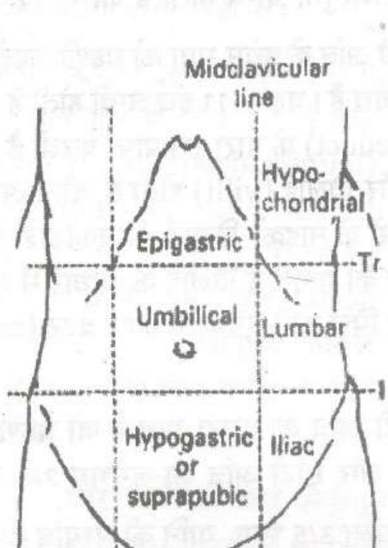

चित्र 1.9 : उदर के क्षेत्र

कुछ अंगों के विवरण

ग्रासनली (Oesophagus) -- यह एक मांसपेशीय नली है जो लगभग 9-9.75 इंच लम्बी है। यह भोजन व पानी को ग्रसनी (pharynx) से अमाशय तक ले जाती है। यह नली जहां पर अमाशय से मिलती है वहां पर फैलती है जिससे भोजन आसानी से जा सके और फिर संकुचित होती है जिससे अमाशय में प्रविष्ट पदार्थ वापस न जाए।

अमाशय (Stomach) -- आहार नली का एक मांसपेशीय थैलीनुमा भाग है जो ग्रासनली और ग्रहणी के बीच में पाया जाता है। यह डायाफ्राम (diaphragm) के नीचे, प्लीहा के दाएं और यकृत के नीचे अंशीय भाग है।

इसके दो द्वार होते हैं :

(1) ऊपर का द्वार ग्रासनली से खुलता है और चारों ओर निचले ग्रासनली अवरोधिनी से घिरा रहता है (lower oesophageal sphincter)।

(2) निचली जठरनिर्गिम (lower pyloric) -- यह ग्रहणी में खुलता है और जठरनिर्गम अवरोधिनी (पाइलोरिक स्फिंक्टर) से घिरा होता है। अमाशय की दीवार में चार सतह होती हैं ।

बाह्य लसीय (serous) सतह या अंगीय पेरिटोनियम (visceral peritoneum) -- यह लगभग पूरे अंग को ढक देता है, यह पेरिटोनियम के बिलकुल नीचे पेशीय सतह होती है। अधःम्यूकोसा (submucosa) संयोजक ऊतकों से बना होता है जिसमें रक्त वाहिनी होती है। उसकी झिल्ली पेशीय होती है जिसमें जठरीय ग्रन्थियाँ (gastric glands), स्तंभीय उपकला (columnar epithelium) के सामान्य नलजीनुमा ग्रन्थि होती है जो पाचक रसों का स्राव करती है।

ग्रहणी (Duodenum) - छोटी आंत्र के प्रथम भाग को ग्रहणी कहते हैं जो जठरनिर्गम (pylorus) और मध्यांत्र (Jejunum) के बीच है। यह 8-11 इंच लम्बी होती है। ग्रहणी लीवर और पैनक्रियास से एक व्यापक पित्त नली (bileduct) के द्वारा रस प्राप्त करती है। ग्रहणी के दीवार में घुमावदार परत (Plical circularis) और विलाई (villi) होती हैं, दोनों अवशोषण के लिए पृष्ठ-क्षेत्र को बढ़ाती हैं। उपकला कोशिकाओं के माइक्रो-विलाई, जिनको ब्रश बोर्डर (brush border) कहते हैं, भी अवशोषण के पृष्ठ-क्षेत्र को बढ़ाते हैं विलाई के आधार में आंत्रीय ग्रन्थि पाचक एनज़ाइम (enjyme) का स्राव करती हैं। पित्त नली एमप्युला आफ वटर (ampulla of vater) पर खुलती है।

मध्यांत्र (जेजुनम)-- यह छोटी आंत्र का दूसरा भाग है जो ग्रहणी से लेकर इलियम तक फैला है। यह लगभग 8 फुट लम्बी और छोटी आंत्र का लगभग 2/5 वां भाग होता है।

इलियम -- छोटी आंत्र का निचला 3/5 भाग, यानि की मध्यांत्र से इलियो-सीकल वाल्व (ilieo-caecal valve) तक, मनुष्य में इसकी लम्बाई 9.6 मी. से 4.72 मी. तक हो सकती है।

सीकम (caecum) -- यह लम्बी आंत्र का एक थैलीनुमा (culde-sac) पहला भाग है। इलियम के प्रवेश द्वार के नीचे, इलियोसीकल वाल्व (illocoecal value) होता है। यह लगभग 6 सेमी. लम्बा और 7.5 सेमी. चौड़ा होता है।

इसके निचले भाग में ऐपेंडिक्स (appendix) होता है।

ऐपेंडिक्स -- यह एक वेस्टीजियल (vestigeal) तंतु है (अप्रकाय - non functional) और इस शब्द से ही स्पष्ट होता है कि यह सिर्फ एक उपांग है।

बृहदान्त्र (colon) - बड़ी आंत्र के अंत में इलियम से नाय तक जो गुदा को घेरता है, यह लगभग 59 इ. (1.5 मी.) लंबी है। यह चढ़ती हुई (ascending), अनुप्रस्थ (transverse), उतरती हुई (descending), सिगमोइड (signoid), उतरती हुई (descending); सिगमोइड (colic flexure or hepatic flexure), या श्रोणि बृहदान्त्र में बांटा जाता है। सीकम (caecum) से शुरु होता है, बड़ी आंत्र का पहला भाग (चढ़ता हुआ बृहदान्त्र) ऊपर जा कर दाहिने कोलिक फ्लेक्चर (colic flexure or hepatic flexure), जहां पर वह घूम कर अनुप्रस्थ बृहदान्त्र के रूप मे यकृत और उदर से निकलता है। प्लीहा में पहुंचने पर नीचे की ओर मुड़ता है (बायीं कोलिक या प्लीहा flexure) और नीचे उतरती हुई बृहदान्त्र के रूप में रहते हुए श्रोपी के किनारे तक पहुंचती है जहाँ वह सिगमोइड के रूप में फैलती हुई मलाशय तक पहुंचती है।

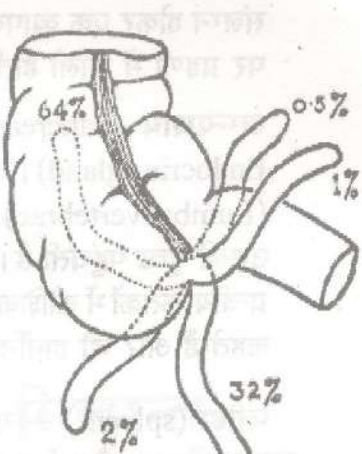

चित्र 1.10 (various sites assumed by vermiform appendix ad frequencies (After wekele)

मलाशय - बड़ी आंत्र का निचला भाग जो सिगमोइड बृहदान्त्र और गुदा नाल के बीच 5 इंच लम्बा होता है। मल त्यागने के केन्द्र होते है 2nd, 3rd, 4th सेकरल (sacral segments) खंडों में।

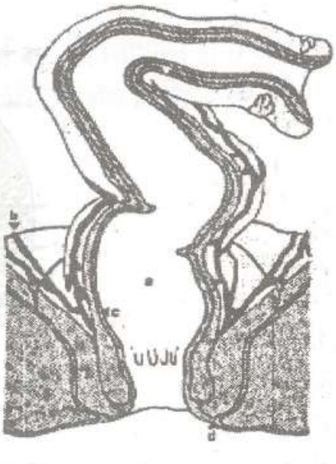
चित्र 1.11 क) मलाशय, ख) शिरा, ग) म्यूकस सतह, ङ) त्वचा

यकृत - यह शरीर का सबसे बड़ा अंग है और इसका वजन लगभग 1200-1600 ग्राम होता है। यह डायाफ्राम के नीचे दाहिनी ओर स्थित है, दाहिनी रोगभ्रमीय अधिजहर (right hypochondrium) और बाएँ रोगभ्रमीय (hypochonrium) का अंशीय भाग को घेरता है, और उरोस्थि (sternun) के निचले भाग के समतल है। इसकी निचली सतह अवतल है जो उदर, ग्रहणी, बृहदान्त्र के हेपाटिक फ्लेक्शर (hepatic flexure), दाहिना गुर्दा और अधिवृक्क कैपसूल (adrenal capsule) यकृत पित्त (bile) का स्राव करता है और कई चयपचय क्रियाओं का केन्द्र है।

पित्ताशय -- यह यकृत के दाहिने और नीचे की ओर शैलीनुमा नाशपाती के आकार होता है, जो यकृत द्वारा स्रावित पित्त को ग्रहण करके संचित करता है। पित्ताशय में पित्त में से पानी को निकाल कर पित्त की घनुता बढ़ाई जाती है। लगभग 500-600 मिलि. पित्त हर दिन स्रावित होता है। उसके पश्चात पित्त को सिस्टिक नली (cystic duct) जो 3 से 4 सेमि. लम्बी होती है, उसके द्वारा मुक्त किया जाता

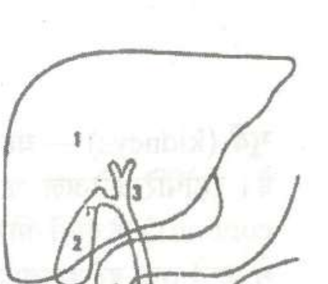

चित्र 1.12 (क) यकृत (ख) पित्ताशय (ग) पित्त नली (घ) ग्रहणी

है, सिस्टिक नल जो लगभग 0.25 ई. व्यास की होती है हेपाटिक नली (Hepatic duct) से संलग्न होकर एक व्यापक पित्त नली बनाती है जो एम्प्युला आफ वेटर (Ampulla of vater) पर ग्रहणी में खाली होती है।

अग्न्याशय (Pancreas) -- यह एक बहीःस्रावी एवं अंतःस्रावी ग्रंथि है (Exocrine and Endocrine gland)। यह उदर के पीछे और क्षैत्रिज स्थिति में पहले और दूसरे कटिभाग कशेरुक (Lumbar vertebrae) के सामने स्थित है। उसका सिर गृहणी से जुड़ा हुआ है और प्लीहा तक उसकी पुच्छ पहुंचती है। सिर और पुच्छ के बीच का भाग इसके अंग को बनाता है। बहीःस्रावी ग्रन्थीय ऊतकों में कोशिकाएं फैली हुई हैं जिनको आइलेट आफ लैंगरहेन (Islets of langerhans) कहते हैं और जो हार्मोन को स्रावित करती हैं।

प्लीहा (spleen) -- यह एक गहरे लाल रंग का अंडाकार अंग है जो पेट के थोड़े नीचे और उदर के एक चौथाई भाग के पश्च भाग में ऊपरी बाईं ओर स्थित है।

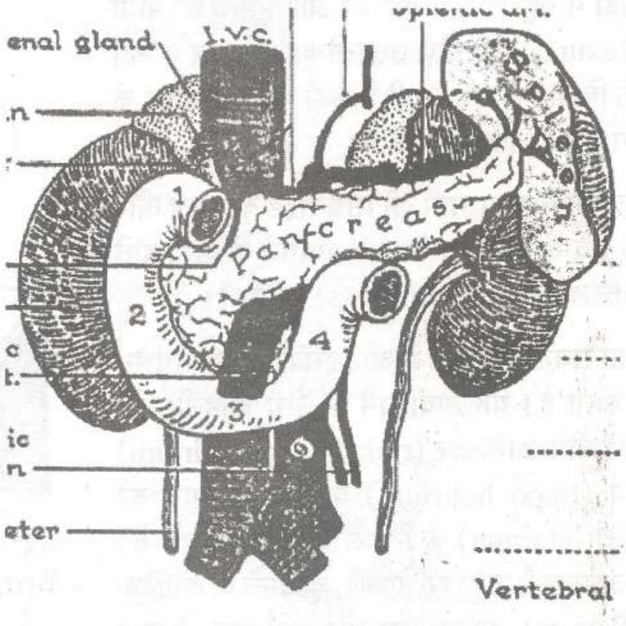

चित्र 1.13 उदरीय अंग और वाहिनी

गुर्दे (kidneys) -- यह बैंगनी भूरे रंग के दो अंग हैं जो उदरीय भाग के पश्च भाग में स्थित हैं। रेट्रोपेरिटोनिअल भाग -- (retroperitoneal area); दोनों गुर्दे कशेरुक दण्ड (spinal column1) के दोनों ओर विद्यमान हैं। गुर्दे रक्त प्लाज़्मा (plasma) से मूत्र बनाते हैं। यह रक्त में पानी तथा इलैक्ट्रोलाइट और अम्ल-क्षार की मात्रा को नियंत्रित करता है और शरीर के सब द्रव्यों को अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रित करता है। बांयें गुर्दे की तुलना में दाहिना गुर्दा थोड़े नीचे की ओर है। हर गुर्दे का वजन 113-170 ग्राम तक होता है और लगभग 11.4 सेमि. लम्बा होता

है, 5-7.5 सेमि चौड़ा और 2.5 सेमि. मोटा होता है। नवजात शिशु में व्यस्क की तुलना में शारीरिक वजन के अनुपात में गुर्दे तीन गुना बड़े होते हैं।

(क) अन्तस्त्वचिका (cortex)

(ख) मज्जका (medulla)

(ग) रीनल धमनी (renalartry)

(घ) रीनल शिरा (Renal vein)

(ङ.) पिरामिड (Pyramid)

(च) मूत्रवाहिनी (ureter)

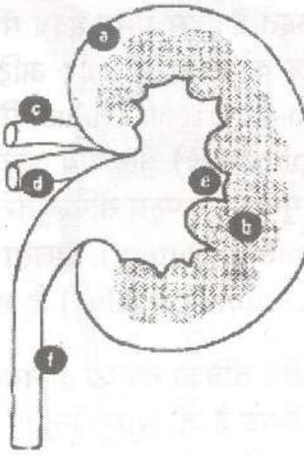

चित्र 1.4 : गुर्दे का अनुलम्ब काट

फेफड़े -- वक्ष के परिक्लोम में स्थित शंखनुमा आकार की दो स्पंनदार इंद्रियां विद्यमान हैं। श्वासनली (trachea) और कंठ (larynx) द्वारा फेफड़े ग्रसनी (कंठ) से जुड़े होते हैं। फेफड़े, पिण्डक (loles), पिण्डिका (lobules), श्वसनी (bronchi), श्वासनिकाएं (luronchioles), कूपिका या वायु थैली और पार्श्वक आवरण से मिलकर बनते हैं। दाहिने फेफड़े में तीन (lobe) और बांयें में दो पालियां होती हैं।

हृदय -- यह एक पोला पेशीय इंद्रिय है जो संचारिका तंतु के पम्प का काम करती है। इसकी तीन परतें हैं, बाह्य हृदायावरण, एक लसीय झिल्ली, मध्य हृदयावरण (myocardium) जो हृदीय पेशियों से बनी हैं और अंतःहृदायावरण (endocarduim), ऐंडोथीलियम जो हृदय और वाल्व को आवरित करता है। हृदय एक रेसेदार थैली हृदयावरण के अन्दर है -- पेरिकार्डियल गुहा (pericardial) वह जगह है जो पेराइटल हृदायावरण और ऐपिकार्डियम के बीच में है और इसमें लसीय द्रव्य होता है जो हृदय स्पंदन के दौरान घर्षण को रोकता है। हृदय के चार कक्ष होते हैं। ऊपर के दो ऐट्रिया (atria) और नीचे के दो निलये (ventricle) कहलाते हैं।

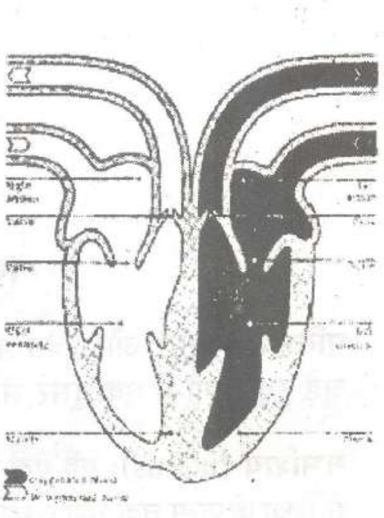

चित्र 1.15 हृदीय कक्षों में रक्त का प्रवाह

ऐट्रिया पतली दीवार की ग्रहण करने वाले कक्ष हैं जो एक दूसरे से अंतरएट्रियल सेप्टम (Interaterial septun) से अलग होते हैं और निलय, मोटी दीवार वाले पम्प वाले कक्ष होते हैं जो अंतरनिलय सेप्टम से अलग होते हैं। शरीर से महाशिरा (vena cava) के द्वारा आक्सीजन रहित रक्त दांयीं ओर ग्रहण करता है और फेफड़ों में प्रवेश करता है। फेफड़ों से आक्सीजनित रक्त बांयीं ओर प्रवेश करता है और पम्प से शरीर में महाधमनी (aorta) और धमनियों द्वारा पहुंचाया जाता है। हृदयी कक्ष के संकुचन को सिस्टोल (systole) कहते हैं और हृदयी कक्ष के शिथिलता को डायस्टोल कहते हैं। इस समय हृदय में रक्त भरता है। हृदय के चार वाल्व होते हैं जो रक्त के उल्टे प्रवाह को रोकते हैं। हर अट्रियम और निलय के बीच प्रवेश द्वार में आलिन्दनिलय वाल्व (atrio-ventri cular value) स्थित है। दांयें निलय और अट्रियम के बीच त्रिवलय वाल्व है (Tricuspid valve) और बांयें अट्रियम और निलय के बीच द्विकर्पद (mitral valve) हैं। दांयें निलय के मुख पर फुप्फुस सेमिल्युनरी वाल्व (Pulmonary semilnar valve) जो फुप्फुस धमनी में (Pulmonary artery), खुलता है बांयें निलय के प्रवेश में है महाधमनीय सेमील्यूनार वाल्व (aortic semilunar value) है जो महाधमनी में खुलता है।

मस्तिष्क (Brain) -- केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र का क्रेनियल भाग (Cranial portion), क्रेनियम के अंतर्गत एक बड़ा मुलायम पिण्ड है जो शिरा तन्तुओं से बना है। मस्तिष्क न्यूरोन (neurons) और शिरा कोशिकाओं से या शिरा (neuralgia) या उसके समर्थक कोशिकाओं से बना है।

धूसर पदार्थ (grey matter) मुख्य रूप से न्यूरोन कोशिकाओं के शरीर, नाभिक (nuclei) और बेसल गुच्छिकाओं से मिलकर प्रमस्तिष्क कौर्टेक्स (cerebral cortex) बनाते हैं।

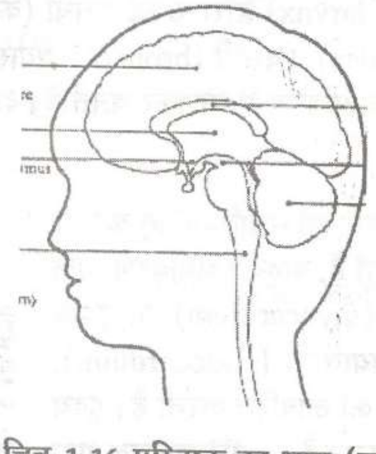

चित्र 1.16 मस्तिष्क का भाग (काट)

मस्तिष्क में धूसर और श्वेत पदार्थ हैं। श्वेत पदार्थ न्यूरोन विधियों से बना है, जो मस्तिष्क के जुड़े हुए भागों में एक दूसरे से और मेरुरज्जु से विभिन्न रास्ते बनाती हैं।

गर्भाशय (uterus): यह एक जनन अंग है, जो भ्रूण (embroy) को धारण करता है, उर्वरण से शिशु के जन्म तक भ्रूण को पोषित करता है। गर्भाशय एक पोला पेशीय, नाशपातीनुमा आकार है जो अंशीय रूप से पेरिटोनियम से आवरित है। गुहा की अंदरूनी सतह में एक लसीय झिल्ली, एन्डौमेट्रियम है। गर्भाशय के तीन क्षेत्र हैं -- ऊपरी चौड़े भाग को शरीर (body), संकुचित मध्य

भाग या तनुयोजी (isthmus) और निचला भाग जो बेलननुमा आकार का होता है उसे ग्रीवा (cervix) कहते हैं। यह गर्भाशय के योनि के ऊपरी भाग में प्रक्षेपित होता है।

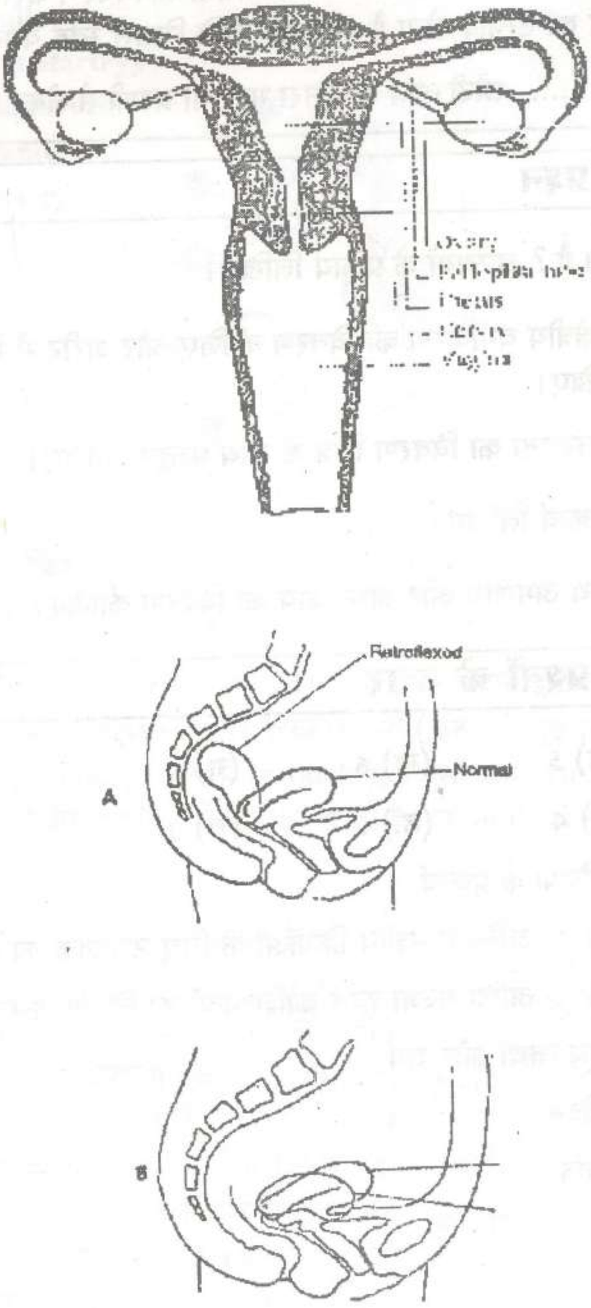

चित्र 1.17 गर्भाशय और उसकी स्थिति

पाठगत प्रश्न 1.2

1. त्वचा की दो विशिष्ट सतह होती हैं यथा ....और ....
2. .... शब्द का प्रयोग उन दो विधियों का विवरण करता है जिसमें स्वेद ग्रंथियों द्वारा स्वेद का उत्पाद होता है और वह विधि जिससे स्वेद बनता है।
3. .... छोटी आंत्र का दूसरा भाग जो ग्रहणी से लेकर इलियम तक फैलता है।

1.6 पाठांत प्रश्न

(क) अस्थि क्या है ? अस्थियों के प्रकार्य लिखिए।

(ख) अस्थि के क्षेत्रीय वर्गीकरण का विवरण कीजिए और शरीर में विद्यमान हर अस्थि की संख्या लिखिए।

(ग) त्वचा की संरचना का विवरण चित्र के साथ प्रस्तुत कीजिए।

(घ) त्वचा के प्रकार्य लिखिए।

(ङ.) चित्र के साथ अमाशय और अग्न्याशय का विवरण कीजिए।

1.7 पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1.1 1. (क) 5 (ख) 6 (ग) 1

(घ) 4 (ङ.) 2 (च) 3

2. अस्थियों के प्रकार्य

(1) अस्थियां पेशीय क्रियाओं के लिए उत्तोलक का कार्य करती हैं।

(2) अस्थि मज्जा रक्त कोशिकाओं का निर्माण करती हैं।

1.2 (1) बाह्य त्वचा और चर्म

(2) संस्वेदन

(3) मध्यांत्र

2

शरीर क्रिया विज्ञान के मूल सिद्धान्त

2.1 परिचय

इस पाठ में, हम मानव शरीर की क्रिया के विज्ञान की विस्तार से चर्चा करेंगे। विभिन्न तंत्रों जैसे पाचन, श्वसन, परिसंचरण, जनन, तंत्रिका तंत्रों को विस्तार में समझेंगे। विशेष ज्ञानेन्द्रियों जैसे आंख, कान की भी चर्चा करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के पश्चात आप समझ पाएंगेः-

- पाचन क्रिया के दौरान, भोजन किन इंद्रियों से होकर जाता है;
- पचे हुए भोजन का अवशोषण कैसे होता है ?
- श्वसन क्रिया में कौन सी विभिन्न इन्द्रियां शामिल हैं।
- सामान्य श्वसन की शरीरिक क्रिया
- परिसंचरण तंत्र के घटक
- हृदय के कार्य
- रक्तचाप को कैसे नापा जाता है
- मूत्र तंत्र के घटक
- गुर्दे के कार्य
- पुरुष जनन तंत्र के घटक और उनके कार्य

- महिला जनन तंत्र के घटक और उनके कार्य
- महिलाओं में रज्जोधर्म कैसे होता है।
- तंत्रिका तंत्र के घटक
- मानव आंख की शारीरिक विज्ञान संरचना
- देखने (दृष्टि) की शारीरिक क्रिया
- मनुष्य के कान का शरीर विज्ञान एवं शरीर क्रिया विज्ञान

2.2 पाचन तंत्र (Digestive system)

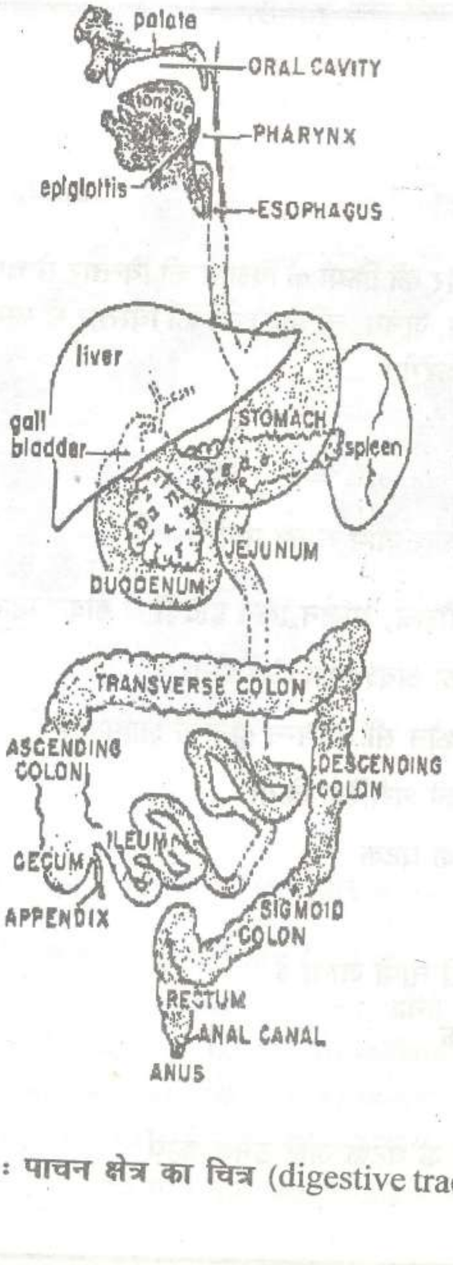

चित्र 2.1 : पाचन क्षेत्र का चित्र (digestive tract)

पाचन तंत्र मुख गुहा से शुरू होता है और अंत होता है गुदा द्वार पर इसका अंत होता है। इसको हम एक पोली नली के रूप में देख सकते हैं जिसमें से कुछ ग्रंथिय इंद्रियां बाहर की ओर बढ़ आई हैं।

मुख -- यह गालों के अंदर की गुहा है जो जीभ, दांत और ग्रसनी से जुड़ी होती है। मुख गुहा के ऊपरी भाग को तालु (palate) कहते हैं।

तालु (Palate) -- यह दो भागों में विभाजित है। इसका अग्र भाग कड़ा एवं हड्डीला होता है और भोजन को मुख गुहा में रोकने में मदद करता है जिससे अच्छे प्रकार से भोजन को चबाया जा सके। इसका पार्श्व भाग मुलायम होता है जो पेशियों से बना होता है और वह भोजन को ग्रासनली की ओर भेजता है।

जिह्वा (tongue) -- यह एक पेशीय इंद्रिय है। यह भोजन को अंदर लेने में मदद करती है और भोजन को लार के साथ मिलाकर उसे मुलायम बनाती है।

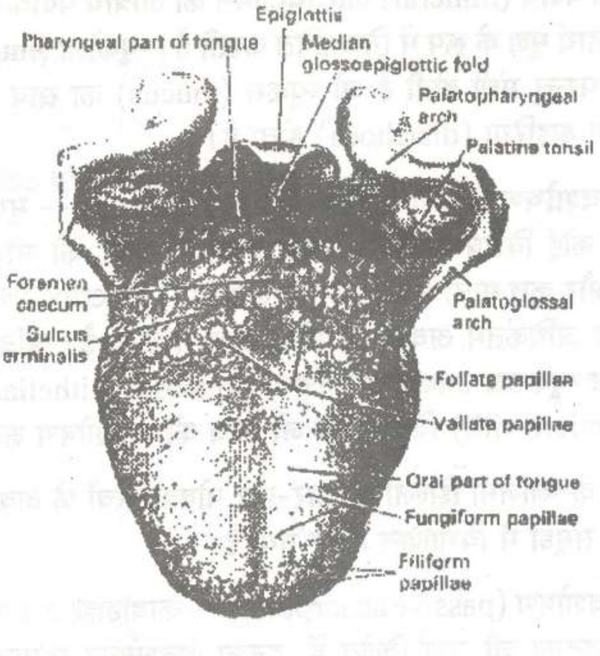

चित्र 2.2 : जिह्वा का अभिपृष्ठ (digestive tract)

दांत -- यह भोजन को चबाने में मदद करते हैं।

लार ग्रंथि तीन जोड़ियों में पायी जाती है --

पैरोटिड (Parotid), सब-मेंडिब्युलर (sub-mandibular) और सब लिंग्युल (sublingual) यह लार का स्राव उत्पन्न करती है, जो मुख में वाहिनी के जरिए पहुंचता है। लार भोजन के बड़े पोलिसैकेराइड (big polysaccharide) को छोटे कणों में तोड़ता है। यह भोजन को द्रव्यीय बनाता है और कई बैक्टीरियाओं को मारता है।

ग्रासनली (oesophagus) -- यह एक पेशीय नली होती है, जिसके ज़रिए भोजन को नीचे भेजा जाता है। यह नली अमाशय में खुलती है।

अमाशय (stomach) -- यह आहारनाल का सबसे फैला हुआ भाग है। यह भोजन को आंशिक पाचन होने तक रोक कर रखता है। यह ग्रैस्ट्रिक रस का स्राव करता है जो पाचन में मदद करता है। यह भोजन को पाचक रसों के साथ मथता (churn) है जिससे वह बारीक गूदा बन जाए।

छोटी आंत्र (smalol intestine) -- यह 6 मी. लंबी है और बड़ी आंत्र तक जारी रहती है। इसे तीन भागों में विभाजित किया गया है -- ग्रहणी (duodenum), मध्यांत्र (jejunum) और इलिजयम (ileum) छोटी आंत्र में पाचन क्रिया पूर्ण होती है और पचे हुए भोजन का अवशोषण होता है यह उन हार्मोन का स्राव करती है जो अग्न्याशयी रस, पित्त और आंत्रीय रस को उत्पन्न करने की क्रियाको नियंत्रित करता है।

बड़ी आंत्र (large intestine) -- बड़ी आंत्र, इलियम से गुदा तक फैलती है जो 1.5 मी. लंबी है। यह पानी, लवण पदार्थ (mineral) और विटामिन का आंत्रीय पदार्थ में से अवशोषण करती है और अपशिष्ट पदार्थ मूल के रूप में निष्काषित करती है। म्यूकोसा (mucosa) में कोई विल्ली (villi) नहीं होती परन्तु ग्रंथी होती है जो म्यूकस (mucus) का स्राव करती है। कोलन की अतिक्रिया के कारण डाइरिया (diarrhoea) होता है।

पचे भोजन का अवशोषण (Absorption of digested food) -- मुख गुहा और ग्रासनली में खाद्य पदार्थ का कोई विशेष अवशोषण नहीं होता है। उदर की सतह में पानी, मद्यसार, अकार्बनिक नमक और कुछ मात्रा में ग्लूकोज (जल विलेय) का अवशोषण होता है। पचे पोषक तत्व (nutrient)का अधिकतम अवशोषण छोटी आंत्र में होता है। आंत्र के भीतरी सतह पर दीर्घरोम (villi) और म्यूकसल उपकलीय कोशिका (mucosal epithelial cells) के खुले सतह पर माइक्रोविल्ली (micro villi) विद्यमान हैं जो आंत्र की अवशोषण क्षमता को बढ़ाता है।

आंत्रीय कोशिकाओं के प्लाजमा झिल्ली के आर-पार पोषक तत्वों के अवशोषण के लिए भिन्न विधियां हैं जिन्हें दो समूहों में विभाजित किया गया है।

(1) निष्क्रीय अवशोषण (passive absorption) -- कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन पाचन क्रिया के अंतिम उत्पाद जो जल विलेय हैं, इनका अवशोषण सामान्य प्रचुरता (simple diffusion), आंत्रीय उपकला (Intestinal epithelium) से होता है।

(2) सक्रिय अवशोषण -- ये सक्रिय अवशोषण कोशिकायें तब भी अवशोषण कर लेती हैं जब आंत्रीय कोशिकाओं और रक्त की तुलना में आंत्रीय ल्यूमन (intestinal lumen) में पदार्थ की घनुता कम होती है।

पाठगत प्रश्न 2.1

(1) रिक्त स्थान भरिए :-

(क) लार ग्रंथि की तीन जोड़ी हैं ...., ... और ....।

(ख) ग्रासनली में भोजन पेशीय दीवारों के ....गति से नीचे भेजा जाता है।

(ग) ...., ... और .... छोटी आंत के तीन भाग हैं।

(2) सही या गलत लिखिए :

(क) तालु, मुख गुहा की ऊपरी छत बनाता है । ( )

(ख) अमाशय पित्त रस का स्राव करता है । ( )

(ग) भोजन का अवशोषण दो प्रकार से होता है सक्रिय और निष्क्रिय अवशोषण।

2.3 श्वसन तंत्र

श्वसन तंत्र से रक्त में आक्सीजन की पूर्ति होती है और कार्बनडाइऑक्साइड बाहर निकलती है।

श्वसन तंत्र के निम्न भाग हैं :—

नाक : नाक गुहा के भीतरी सतह पर रेशेदार उपकला (ciliated epithelium) विद्यमान है जिनमें गोबलेट आल (goblet alls) हैं जो म्यूकस (mucus) को उत्पन्न करते हैं जो अंदर ली हुई वायु में उपस्थित धूल के कण और बैक्टीरिया को फंसा लेता है और अंदर जाने से रोकता है।

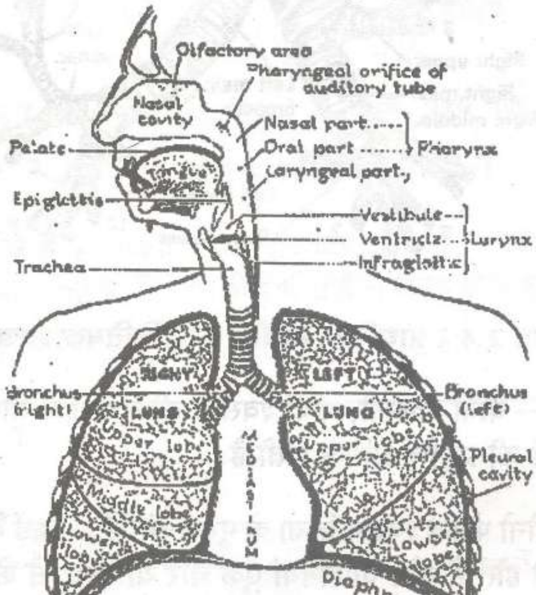

चित्र 2.3 : श्वसन तंत्र का चित्र

ग्रसनी (pharynx) :

यह एक पेशीय नली है जो पाचन और श्वसन तंत्र दोनों के द्वारा प्रयोग में आती है। यह 12–14 सें.मी. लंबी होती है जो खोपड़ी के आधार से शुरू होती है और छठी ग्रीवीय मेरुदंड के समतल तक जाती हैं जो ग्रासनली में खुलता है। ग्रसनी के तीन भाग होते हैं -- नासिका ग्रसनी (nasopharynx), ओरोग्रसनी (Oropharynx) और कंठीय ग्रसनी (Laryngopharynx)।

कंठ (Larynx) -- यह कक्षनुमा अंग है, जो जिह्वा के तालू से लेकर श्वासनली के ऊपरी अंत तक फैली है। यह ध्वनि उत्पन्न करने का अंग है और यह श्वासनली में भोजन के प्रवेश को रोकने के लिए वाल्व का कार्य करता है। इसका ऊपरी भाग कंठीय ग्रसनी में खुलता है और निचला भाग श्वासनली में खुलता है।

श्वासनली (Trachea) -- यह एक 10 से.मी. लम्बी नली है जो 5 वें थोरेक्सीय (5th Thoracic vertebrae) मेरुदंड तक है, जो दाई और बाई शाखाओं में विभाजित होता है। श्वासनली 10–12 'सी' आकार के उपास्थियों के द्वारा खुलि रहती हैं। इसका एक भाग गर्दन में और एक भाग वक्षीय गुहा के ऊपरी भाग में होता है।

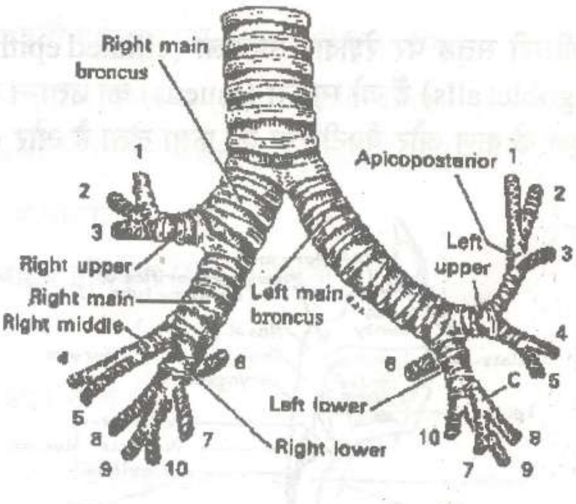

चित्र 2.4 : प्राथमिक, द्वितीय और त्रितियक शाखाएं

श्वसनी (Bronchi) -- दायीं श्वसनी, बायीं श्वसनी की तुलना में सीधी एवं छोटी है इसलिए दायें फेफड़े में रोग होने की प्रवृत्ति अधिक होती है।

फेफड़े (Lungs) -- दोनो फेफड़े श्वसन क्रिया के मुख्य अंग हैं। फेफड़े पिरामिड आकार के अंग हैं जो अत्यधिक लचीले होते हैं और वाहिनियां एक चीर या दरार से फेफड़े में प्रवेश करती हैं, उस सतह को हाइलम (Hilum) कहते हैं। दांया फेफड़ा, बांयें फेफड़े से बड़ा है। दायां फेफड़ा तीन पालियों (lobe) में विभाजित है -- ऊपरी (superior), मध्य (middle) और निम्न (inferior), जबकि बांयें फेफड़े में दो पालियां ऊपरी और मध्य हैं।

फेफड़े एक दुहरी झिल्ली, जिसे पार्श्वक (pleura) कहते हैं, से आवरित होते हैं। पार्श्वक झिल्लियों

के बीच में पार्श्वक द्रव्य से जगह भरी होती है जो पार्श्वक झिल्ली को पृथक करती है।

डायाफ्राम (Diaphragm) -- यह एक रेशोपेशीय अंग है जो वक्षीय गुहा और उदर गुहा के बीच में विद्यमान है। उसकी ऊपरी उतल सतह पार्श्वक और पेरिकार्डियम से आंशिक रूप से आवरित है और नीचे का अवतल सतह पेरिटोनियम से आवरित है। जब डायाफ्राम संकुचित होता है, तो नीचे की ओर जाता है, वक्षीय गुहा की क्षमता बढ़ती है और फेफड़ों में वायु अंदर खींच ली जाती है।

श्वसन की शरीर क्रिया विज्ञान

श्वसन तंत्र की मुख्य क्रिया शारीरिक ऊतकों को पर्याप्त मात्रा में आक्सीजन उपलब्ध कराना और निःश्वसित वायु में कार्बन डाइआक्साइड को बाहर निकालना है।

अंतःनिश्वासन (inspiration) का अर्थ है फेफड़ों में वायु अंदर लेना और निःश्वसन (expiration) का अर्थ है उसे बाहर निकालना।

अंतःश्वसन : इसमे फेफड़े चौड़े होते हैं (1) जब डायाफ्राम नीचे जाता है, वह फेफड़ों के निचली सतह को नीचे खींचता है; (2) पसलियां और उरस्थि जब ऊपर उठती हैं तो छाती का अग्र-पार्श्वीय व्यास बढ़ता है। यह तब संभव होता है जब इंटरकोस्टल पेशियां (Intercostal muscles) संकुचित होती हैं।

निःश्वसन (Expiration) : इस समय डायफ्राम फैलता है और फेफड़ों, छाती की दीवार और उदरीय अंगों का लचीलापन परावर्तन के कारण फेफड़ों को दबाता है। पसलियों के पिजंड़े को नीचे खींचने वाली उदरीय पेशियां और वक्षीय गुहा की इंटरकोस्टल पेशियां हैं।

टाइडल आयतन (Tidal Volume) : शांत श्वसन क्रिया के समय, श्वास अंदर लेने और बाहर करने में वायु के आयतन को टाइडल आयतन (500 मि.ली.) कहते हैं ।

रक्त में गैस का परिवहन -- रुधिर कोशिकाओं में मुख्य रूप से आक्सीजन ली जाती है आक्सीहीमोग्लोबिन (Oxyhaemoglobin) के रूप में, जो ऊतकों के श्वसन क्रिया के लिए आक्सीजन को छोड़ते हैं। पेशीय व्यायाम के दौरान आक्सीजन पूरी तरह अलग होता है। परंतु ऊतकों से कार्बनडाइआक्साइड फेफड़ों को रक्त के जरिए, घोल के रूप में, बाइकार्बोनेट और आंशिक रूप से हीमोग्लोबिन से जुड़कर, कार्बोक्सीहीमोग्लोहिबन के रूप में भेजी जाती है।

पाठगत प्रश्न 2.2

रिक्त स्थान भरो :

1. नासिका गुहा के भीतरी सतह पर .... उपकला है जिसमें ....है, जो अंदर ली हुई वायु में धूल कण और बैक्टीरिया को फंसा लेता है।

2. ...., ..., ... ग्रसनी के तीन भाग होते हैं।

3. कंठ ऐसा अंग है जो .... को उत्पन्न करता है।

4. शांत श्वसन क्रिया के दौरान, अंदर या बाहर दी गई वायु के आयतन को .... हैं।

5. रुधिर कोशिकाओं में .... के रूप में आक्सीजन ले जाया जाता है।

6. .... के रूप में और .... के रूप में हीमोग्लोबिन से आंशिक रूप में जुड़कर।

2.4 परिसंचरण तंत्र (Circulatory System)

रक्त -- यह लाल रंग का द्रव है, जो हृदय-संवहन तंत्र (cardio vascular system) यथा - हृदय और रक्त वाहिकाओ मे बहता है। रक्त में विद्यमान कोशिकाएं -- इरिथ्रोसाइटस (erytheocytes R.B.C), ल्यूकोसायट (WBC) और थ्रोम्बोसायट (Plalelets) हैं। रक्त के इन कोशिकीय घटक को कण भी कहते हैं। एक वयस्क पुरुष में रक्त का आयतन लगभग 6 ली. और वयस्क महिला में लगभग 5 लीटर होता है।

लाल रुधिर कणिका (R.B.C) -- रक्त की मुख्य कोशिकीय घटक (4-5.5 मिलियन/cu. mm) हैं, इरिथ्रोसायट (erythrocytes) या लाल रुधिर कणिका। यह द्विअवर्तलीय डिस्क आकार की होती हैं, जिसमें नाभिका (nucleus) नहीं होता है और हीमोग्लोबिन पदार्थ विद्यमान है, जो इसे लाल रंग देता है।

इसके कई कार्य हैं, जैसे--

- गैस अभिगमन (transport) का कार्य।
- अम्लीय - क्षारीय समन्वय को बनाए रखना।
- यह बिलिरुबिन को बनाता है।
- सम्पूर्ण रक्त के चिपचिपेपन (vescosity) को बनाए रखता है।

लाल रुधिर कणिका - (क) अग्र दृश्य (ख) पार्श्व दृश्य

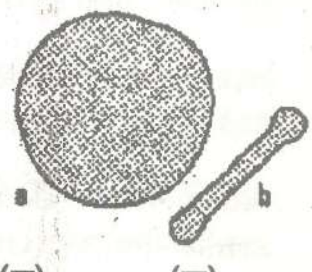

चित्र 2.5

श्वेत रुधिर कणिका (W.B.C) -- श्वेत रुधिर कणिका या ल्यूकोसाइट का रंग श्वेत नहीं, अपितु रंगहीन होता है। यह रोगों से लड़ कर (बैक्टीरियल, वाइरल, पैरासाईट आदि), एंटिजन (antigens) और मैलिगनैनसी (malignancy) के विरुद्ध शरीर की रक्षा करते हैं।

यह निम्न प्रकार के होते है :

- न्यूट्रोफिल (neutrophils) - 60-70%
- स्नोफिल (eosinophils) - 1-4%

- बेसोफिल (basophils) - 0-1%
- लिम्फोसायटस् (lymphocytes) - 25-30%
- मोनोसायट्स् (monocytes) - 5-20%

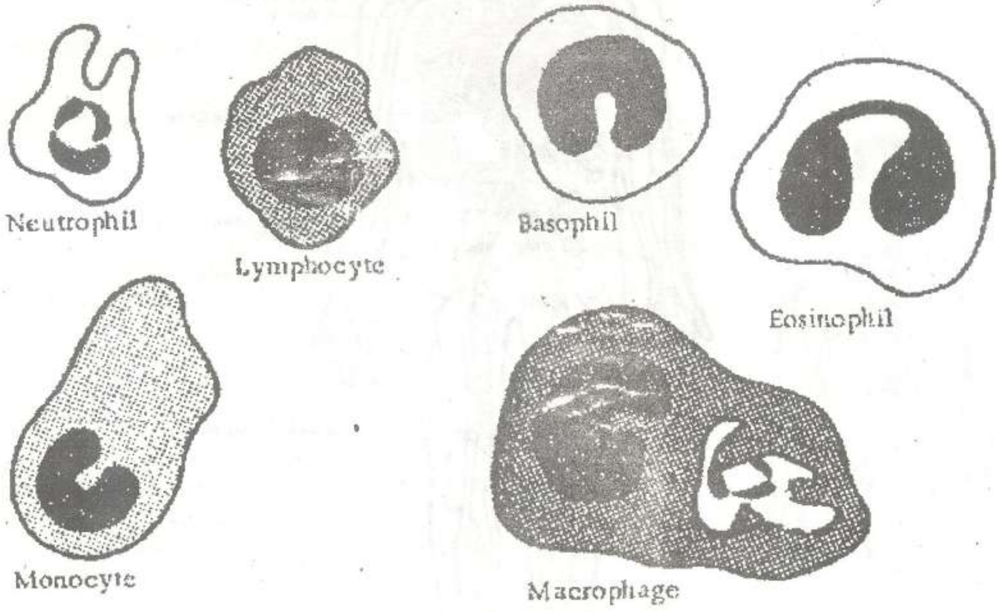

चित्र 2.6 : प्रतिरक्षा -- श्वेत रुधिर कणिका

हीमोग्लोबिन (Haemoglobin) -- यह लाल रुधिर कोशिकाओं का आयरन (iron) सम्मिलित पदार्थ है जो फेफड़ों से अन्य ऊतकों तक आक्सीजन का परिवहन करता है। Hb की महिलाओं के रक्त के मात्रा लगभग 12-16 ग्राम/100 ml. पुरुषों में औसतन 14-18 ग्रा./100 ml. और बच्चों में थोड़ा कम होती है।

हृदय -- हृदय एक पेशीय पम्प है, जिसमें चार कक्ष हैं, 2 दाहिने और 2 बायें ओर और दोनों कक्ष में कोई सीधा संचार नहीं है। दायीं ओर के संचार को वेनस (venous) कहते हैं और हृदय के बांयीं ओर के संचार को आर्टीरियल (arterial) कहते हैं।

हृदय के प्रकार्य :

- रक्त का संचारण
- पर्याप्त आक्सीजन और पोषण उपलब्ध कराना।
- सभी कोशिकाओं, ऊतकों और शारीरिक अंगों से उपयुक्त रूप से अपशिष्ट पदार्थों को निकालना।

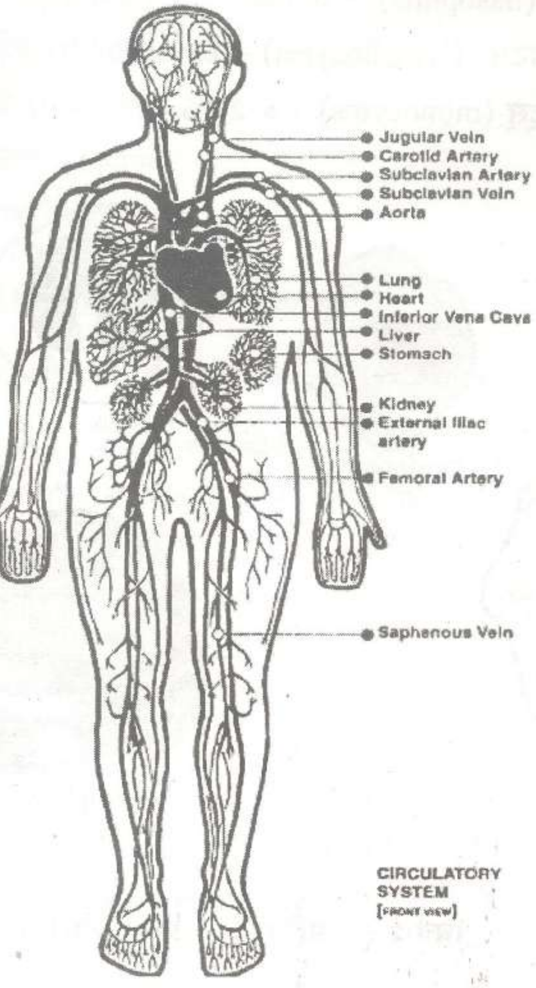

चित्र 2.7 : हृदय और रक्तवाहिका सहित हृदय संवहन तंत्र

हृदीय चक्र (Cardiac Cycle) : पहली हृदय स्पंदन से लेकर दूसरी हृदय स्पंदन की शुरुआत के समय को हृदय चक्र कहते हैं। हर चक्र का आरंभ सायनस नोड (sinus node) से होता है, जो हृदय के दाएं आरिकल (auricle) में स्थित है।

सिस्टोल और डायस्टोल (Systole and Diastole) : हृदीय चक्र में शिथिलता के समय को डायसटोल कहते हैं, इस समय हृदय रक्त को भरता है, उसके बाद संकुचन का समय आता है, जिसे सिस्टोल कहते हैं।

रक्तचाप (Blood Pressure) : धमनीय वाहिकाओं (arterial vessels) की पार्श्व दीवारों पर रक्त द्वारा दबाव को रक्तचाप कहते हैं। बांए निलय सिस्टोल के दौरान चाप अधिक होता है, एक स्वस्थ मनुष्य में लगभग 120 मि.मि. of Hg । इसको सिस्टोलिक रक्त-चाप कहते हैं। जब बांया निलय सिस्टोल समाप्त होता है, तो महाधमनीय वाल्व बंद होता है। निम्न रक्तचाप होता है 80 मि.मि. of Hg.। इसको डायस्टोलिक रक्तचाप कहते हैं।

रक्तचाप नापने की विधि :

जिसका रक्तचाप मापना हो उनको पीठ पर सीधा लिटा दें। कफ (cuff) को बांए हाथ पर लपेट दें। स्फिगमोमेनोमीटर (sphygmomanometer), हृदय और हाथ सब समान समतल पृष्ठ में होने चाहिए। पम्प को धीरे-धीरे दबाकर दाब बढ़ाते हैं, जिससे रेडियल धमनीय नब्ज की स्पंदन साथ-साथ बढ़ती है। एक समय आता है जब स्पंदन गायब हो जाता है। ऐसे समय में पारे के स्तंभ में पारे का तल नापते हैं। पम्प को धीरे से खोल कर कफ को पूरी तरह से ढीला कर देते हैं। स्टेथस्कोप को कोहनी के ब्रेकिअल (brachial) धमनी के ऊपर हल्के से रखते हैं। कफ को फिर से फुलाया जाता है और तब तक फुलाने की क्रिया करते हैं जब तक पूर्व पारे के स्तंभ की ऊंचाई तक न पहुंच जाए, जहां त्रैज्य नब्ज गायब हो जाती है। पिचकाने की क्रिया 2-3 मि.मि. प्रति सेकंड की दर से शुरू की जाती, न ज्यादा न कम। शुरू में स्टेथस्कोप द्वारा कोई ध्वनि नहीं सुनाई देती है, परंतु एक स्थिति ऐसी आती है जब एक 'टिक' की आवाज सुनाई देती है जो सिस्टोलिक रक्तचाप को संकेत देता है, इस समय पारे स्तंभ की रीडिंग ली जाती है, पिचकाना जारी रहता है, जब तक सब ध्वनियों गायब न हो जाएं।

नब्ज़ -- हृदय स्पंदन के साथ धमनियों पर आवधिक बल को पल्स या नब्ज़ कहते हैं। वयस्क पुरुष की सामान्य नब्ज़ गति की दर 72 और महिलाओं में 80 होती है। इसको कलाई के रेडियल धमनी में महसूस किया जाता है।

पाठगत प्रश्न 2.3

1. रिक्त स्थान भरिए :

   (क) .... और .... रक्त की कोशिकाएं हैं।

   (ख) रक्त में हीमोग्लोबिन की औसतन मात्रा, महिलाओं में .... और पुरुषों में ....होती है।

   (ग) हृदीय चक्र में शिथिलता की अवधि को .... कहते हैं और संकुचंता की अवधि को .... कहते हैं।

   (घ) सामान्य हृदय स्पंदन गति पुरुष में .... और वयस्क महिला में .... होती है।

2. बताएं सही या गलत :

   (क) आर.बी.सी. में नाभिका होती है।

   (ख) आर.बी.सी. में हीमोग्लोबिन होता है और वह द्विअवतलीय होती है।

   (ग) न्यूट्रोफिल की सामान्य सीमा 0-5 प्रतिशत होती है।

   (घ) हृदय के चार कक्ष होते हैं।

(ङ.) व्यस्क में सामान्य सिसटोलिक चाप 120 mm Hg होता है और सामान्य डायस्टोलिक चाप 80 mm Hg. होता है।

(च) रक्तचाप नापने के यंत्र को स्फिग्मोमेनोमीटर कहते हैं।

2.5 मूत्र तंत्र (Urinary System)

मूत्र तंत्र में दो गुर्दे, मूत्र वाहिकाएं (ureters) और मूत्राशय होते हैं। शरीर से अपशिष्ट पदार्थो जैसे यूरिया, यूरिक ऐसिड, क्रिएटिनिन, प्यूरिन पदार्थ, कीटोन पदार्थ, हार्मोन्स के व्युत्पति और ड्रग्स को निकालने का काम मूत्र तंत्र करता है।

गुर्दों की मूल प्रकार्यात्मक इकाई वृक्काणु (nephron) है।

गुर्दों के प्रकार्य (functions of kidneys)

- छनित कोशिका (glomerular filtrate) का उत्पाद
- पानी तथा इलैक्ट्रोलाइट के संतुलन को नियंत्रित करना।
- रक्त के पी.एच स्तर को बनाए रखना।
- शरीर के कैल्शियम स्तर को बनाए रखना
- रैनिन (rennin) का उत्पादन।
- एरिथ्रोपोइटिन (erythropoeitin) का उत्पादन।

मूत्र वाहिनी (ureter) : गुर्दे द्वारा उत्पन्न मूत्र, मूत्रवाहिनी (ureter) के मार्ग से मूत्राशय (urinary bladder) में पहुँचता है। मूत्रवाहिनियाँ लगभग 25 से.मि. लम्बी नलिकाएँ हैं जो गुर्दे के श्रोण (pelvis) से आरम्भ होकर मूत्राशय के पश्च सतह तक जाती है। क्रमाकुंचक तरंगें (Peristaltic waves) मूत्र को गुर्दे के श्रोण से नीचे मूत्राशय में धकेलने में सहायक होती है। मूत्रवाहिनियों के निचले छोर पर श्लेष्मा वलन (mucuousfold) होता है जो वाल्व के रुप में कार्य करता है तथा मूत्र के पीछे की ओर के प्रवाह को विशेष रूप से ब्लैडर के संकुचन के समय रोकता है।

मूत्राशय (urinary bladder) : यह एक लचीली फैली हुई (distensible) थैली है, जो 200 - 400 मि.ली. लिटर मूत्र एकत्र कर सकती है। यह संघान जहानास्थि (symphysis pubis) के मध्य स्थित है। ब्लैडर (bladder) की सतह पर 3 मार्ग होते हैं - 2 मूत्रवाहिनियों में तथा एक मूत्रमार्ग (urethra) में। ब्लैडर का आन्तरिक भाग श्लेष्मा झिल्ली (mucous memberane) से अवतरित होता है और यह श्लेष्मा झिल्ली एक खाली ब्लैडर है, और झुर्रीदार दिखती है।

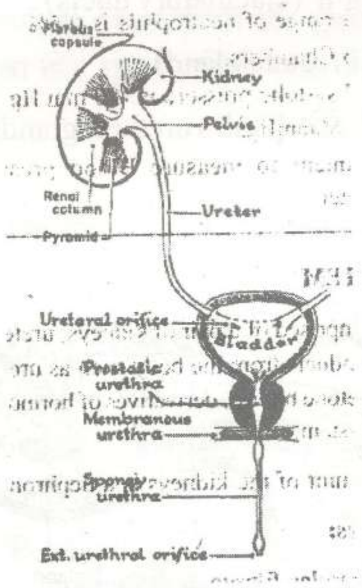

चित्र 2.8 : मूत्र तंत्र (पुरुष)

मूत्रमार्ग (urethra) – यह एक नली है, जो ब्लैडर के निचले छोर से आंरभ होती है और पुरुषों में शिश्न (penis) के बाह्य छोर तक और महिलाओं के योनि के अग्र भाग में छोटी सी दरार तक प्रवेश करती है।

पाठगत प्रश्न 2.4

1. गुर्दे के किन्हीं दो प्रकार्यों का उल्लेख कीजिए।
2. गुर्दे की मूल प्रकार्यात्मक इकाई का नाम लिखिए।
3. मूत्र तंत्र के अपशिष्ट पदार्थों के नाम लिखिए जिन्हें शरीर से निकाला जाता है।

2.6 जनन तंत्र (Reproductive System)

पुरुष जनन तंत्र – इस तंत्र में निम्नलिखित भाग हैं:

- 2 अण्डग्रंथि (पुरुष जननग्रंथी) (testes)
- 2 अध्यंड (epididymis)
- 2 शुक्र वाहिनि (2 seminal ducts)

- 2 शुक्राश्य (2 seminal vesicles)
- 2 उपसारित वाहिनी (ejaculatory ducts)
- 1 प्रोस्टेट ग्रंथी (Prostate gland)
- 2 कंद-मूत्रि मार्ग ग्रंथि (Bullo urethral glands)
- शिश्न (Penis)

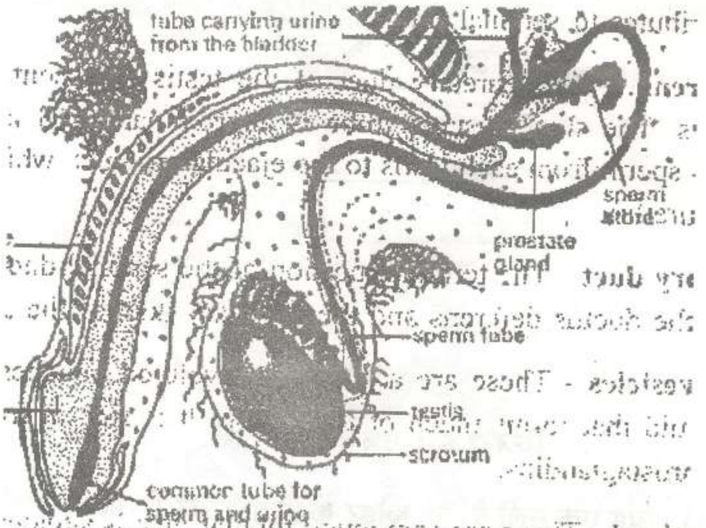

चित्र 2.9

अण्डग्रंथि (testes) एक ग्रंथीय अंग है जो स्क्रोटम (scrotum) में विद्यमान है। यह आकार में अण्डाकार होते हैं और शुक्राणीय डोरी से लटके हैं, जो एक रेशेदार संयोजी ऊतक हैं (fibrousconnective tissue) और इसमें शुक्र वाहिनि (lymphatic vessels) अण्डग्रंथीय धमनी, शिरा, लसिका वाहिका (lymphatic vessels) और तन्तु (nerves) शामिल हैं। शुक्राणु का उत्पादन करना और हार्मोन का स्राव इसके कार्य हैं।

स्क्रोटम (Scrotum) एक प्रकार की त्वचार- यह जांघ के अग्र भाग में प्यूबिक सिमफायासिस (public symphysis) के नीचे एक आवरित थैली के रुप में स्थित है। स्क्रोटम की पेशीय यानि कि दारटोस पेशीय (dartos mucle) स्क्रोटम को दो कक्ष में विभाजित करती है - दायां और बाएं, हर एक में अण्डग्रंथि है। अण्डग्रंन्थि में बड़ी संख्या में घुमावदार नलियाँ हैं जिन्हें शुक्रजनक नलकियां (seminiferous tubules) कहते हैं। ये नलिकाएं शुक्राणुओं का सृजन करती हैं। इस प्रक्रिया को नलिकाएं शुक्राणुजनन (spermatogenesis) कहते हैं। यह शुक्रजनक नलिकाएँ अंत में मिलकर प्लेक्सस (plexus - शिराओं का जाल) बनाती है जिसमें वाहिनि बाहर आकर अध्यंड के सिरे में प्रवेश करती है।

अध्यंड (Epididymis) :- प्रत्येक अध्यंड में झिल्लीदार आवरण से संलिप्त एक एकल सुगठित कुंडलीकृत संकरी नली होती है। यह अण्डग्रन्थि (testis) के साथ व उसके ऊपर आवरित होती है। यह लगभग 20 फीट लम्बी है। इसका ऊपरी छोर शुक्रजनक (seminiferous) नलिकाओं से जुड़ा होता है तथा निचला छोर शुक्र प्रवाहिणी (vas deferes) से जुड़ा होता है।

प्रकार्य (functions) :

- यह अण्डग्रन्थि से शुक्र प्रवाहिणी तक शुक्राणुओं के मार्ग में वाहिका (duct) का कार्य करता है।
- यह अपसारण (ejaculation) से पूर्व शुक्राणु को भण्डारित करता है।
- शुक्राणु द्रव्यों में अंशदान करता है।

शुक्र प्रवाहिणी (Vas deferens) -- अण्डग्रंथि की स्रावक वाहिनी (secretory duct), अध्यंड की निरंतरता है। पतली पेशीय नली जो लगभग 18 इंच लम्बी है तथा अपसारित वाहिनी (ejaculatory duct) के लिए प्रत्येक अण्डग्रंथि से शुक्राणु पारवहन करता है तथा यह अपसारित वाहिनी प्रोस्टेटिक मूत्रमार्ग में खाली होती है।

अपसारित वाहिनी (Ejaculatory duct) : शुक्रीय वाहिनी (seminal duct) के अंतिम भाग निर्माण शुक्राशय के स्रावक वाहिनी तथा आस्थगित वाहिनियों के संयोजन द्वारा होता है।

शुक्राशय (Seminal vesicles) : यह व्याकृत पाउचों (convoluted pouches) का एक युग्म है जो श्यान तरल (viscous fluid) को स्रावित करता है तथा यह श्यान तरल वीर्य (semen) में मुख्य भाग का सृजन करता है। इसमें भरपूर फलशर्करा (frustose) होता है तथा इसमें प्रोस्टाग्लैंडिन (prostaglandin) भी होते हैं।

पुरस्थ ग्रंथि (Proslate gland) : ये संयुक्त नलिका ग्रंथियां हैं जो ब्लैडर के ठीक नीचे स्थित हैं। मूत्रमार्ग (urethra) पुरस्थ के मध्य में एक छोटे छिद्र से गुजरता है। बुजुर्गों में पुरस्थ के बढ़ने से मूत्रमार्ग संकुचित हो जाता है और इसके कारण मूत्र रुकने लगता है।

प्रकार्य (functions) :

- पुरस्थ एक पतला क्षारीय पदार्थ स्रावित करता है जो शुक्रीय द्रव्य के बड़े भाग का निर्माण करता है।
- इसकी क्षारियता पुरुष मूत्रमार्ग में उपस्थित अम्ल से तथा महिलाओं की योनि में उपस्थित अम्ल से शुक्राणु (sperm) को सुरक्षा प्रदान करती है तथा मूत्र द्वारा मूत्रमार्ग में होनेवाली क्रिया को निष्क्रीय बनाती है।
- यह शुक्राणु की गति में वृद्धि करती है।

कंद-मूत्रिमार्ग ग्रंथि (Bulbo-urethral gland) **या कावपर ग्रंथि** (cowper's gland) : ये पुरस्थ (Prostate) के नीचे स्थित होती है और मटर के आकार की होती है। यह पुरस्थ द्रव्य के समान वीर्य का क्षारीय द्रव्य भी स्रावित करती है।

शिश्न (Penis) : यह एक मैथुनांग (copulatory organ) है जो महिला की योनि में शुक्राणु एकत्र करता है। यह उत्थापित के तीन सिलैंड्रिकृत शैल से निर्मित है तथा प्रत्येक पृथक झिल्लीदार आवरण से घिरा रहता है किन्तु ये त्वचा (skin) के आवरण में समूहबद्ध रहते हैं। मूत्रमार्ग (urethra) शिश्न से होकर निकलता है जो मूत्र तथा वीर्य के लिए मार्ग के रूप में कार्य करता है।

महिला जनन तंत्र

इसमें शामिल है एक जोड़ी अंडाशय (ovaries) एक जोड़ी डिम्ब वाहिनी (fallopian tubes), गर्भाशय (uterus), ग्रीवा (cervix) और योनि (vagina)।

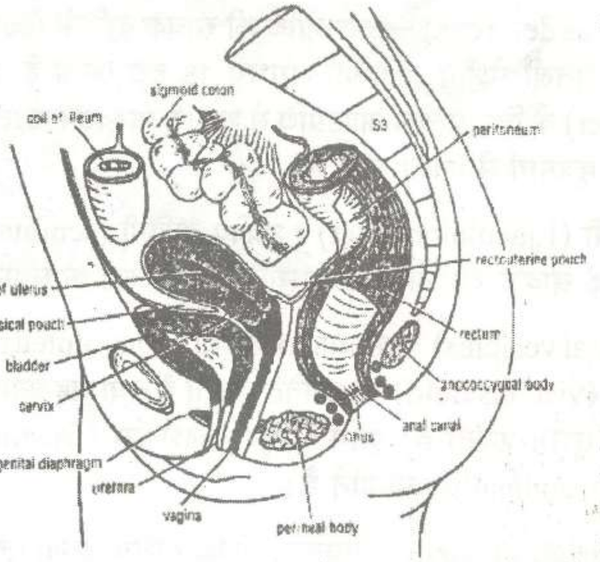

चित्र 2.10 : महिला श्रोणि का सेजि़टल ()

अंडाशय (ovaries) -- यह बादाम जैसे आकार का एक युग्म (pair) है जो उदरीय गुहा (abdominal cavity) में कशेरुक दण्ड के दोनों ओर एक-एक स्थित है। प्रत्येक अंडाशय अंडारायधर स्नायु (mesovarian ligaments) द्वारा व्यापक स्नायु के पश्च स्तर के साथ संलग्न है।

प्रकार्य (functions) :

- अंडाणु उत्पन्न करना।
- महिला हार्मोन -- ईस्ट्रोजन तथा प्रोजेस्टरोन का श्रवण।

ये हार्मोन :

— द्वितीय लैंगिक लक्षण को नियंत्रित करते हैं।

— डिम्ब वाहिनी, गर्भाशय, योन की वृद्धि व विकास को नियंत्रित करते हैं।

— आर्तव चक्र (menstrual cycle) को नियंत्रित करते हैं।

— स्तन ग्रंथियों (mammary glands) में परिवर्तन तथा वृद्धि को नियंत्रित करते हैं।

डिम्बवाहिनी नलियां (fallopian tubes) **या अण्डावाहिनी** -- इन नलियों का एक जोड़ा अंडाशय से गर्भाशय तक जाता है।

गर्भाशय (uterus) -- यह महिला के श्रोणि क्षेत्र में स्थित एक नारुरूप (pyriform) पेशीय अंग है। इसके ऊपरी चौड़े भाग को शरीर (body) कहते हैं तथा पतले निचले भाग को ग्रीवा (cervix) कहते हैं। मतोटी गर्भाशय भित्ती की 3 परतें होती हैं -- गर्भाशय अंतःस्तर, मध्यम मायोमीट्रियम तथा बाहरी अपूर्ण आंशिक पेरिटोनियम। गर्भाशय अंतःस्तर अधिक संवहनी है। गर्भाशय (uterus) भ्रूण (embryo) को पोषित तथा विकसित करता है उसे पोषक तत्व व आक्सीजन उपलब्ध कराता है और कार्बन डाईआक्साईड व अपशिष्ट को हटाता है।

योनि (vagina) -- यह महिला में विद्यमान मैथुन कक्ष है। गर्भाशय की ग्रीवा योनि के ऊपरी भाग में खुलती है। योनि एक द्वार के रास्ते खुलती है। महिलाओं में, मूत्रमार्ग तथा योनि के लिए पृथक मार्ग हैं। अविवाहिताओं (virginal state) में एक पतली झिल्लीदार तनुपट, योनिच्छद (hymen) योनिकक्ष में लगी रहती है।

भग (vulva) -- महिला की बाहरी इंद्री को भग (vulva) कहते हैं, इसमें एक द्वार (orifice), वृद्ध भगोष्ठ (Labia majora), लघु भगोष्ठ (Labia minora), भगशेफ (clitoris) तथा बारथोलियन ग्रंथि शामिल हैं। योनि का द्वार त्वचा की दो पेशीय परतों यथा वृद्ध भगोष्ठ से बंद रहता है। इनके भीतर, लघु भगोष्ठ (labia minora) का एक युग्म होता है। 2 लघु भगोष्ठ के संयोजन पर लगभग मटर के आकार का एक संवेदनशील उच्छ्रदि (erectile) अंग होता है। यह क्लाइटोरिस (clitoris) है, जो पुरुष शिश्न के समरूप है।

बरथोलियन ग्रंथि (Bartholin's gland) : इसे बृहद प्रघाण ग्रंथि भी कहते हैं। ये सेम के आकार की दो ग्रंथियां हैं, जो योनि कक्ष के दोनों ओर होती हैं। ये स्नेहनद्रव्य स्रावित करती हैं तथा प्रघाण (vestibule) में खुलती हैं ।

रजोधर्म (menstruation) : महिलाओं में 12 वर्ष की आयु से 47 वर्ष की आयु तक लगभग प्रत्येक 28वें दिन से उनकी योनि से रक्त तथा श्लेष्मा (mucous) का विसर्जन (discharge) होता है। यह विसर्जन 2 से 8 दिन (सबसे सामान्य 4 से 6 दिन) होता है तथा इससे पूर्व या इसके दौरान विभिन्न अप्रिय लक्षण उत्पन्न होते हैं जैसे सिरदर्द तथा मचली (nausea)। निस्संदेह रजोधर्म या 'पीरियड' महिला के शरीर में अण्डा उत्पादन तथा हार्मोन परिवर्तन के नेमी चक्र का बाहरी संकेत है।

अंडा उत्पादन (Egg production) -- प्रत्येक अंडाशय (ovary) में कोशिकाओं के समूह होते हैं, जिन्हें पुटक (follicles) कहते हैं। इनके भीतर अपरिपक्व अंडे (ओवा) होते हैं। जब लड़की

लगभग 12 वर्ष की होती है तो ये अंड सामान्यतः वैकल्पिक अंडाशयों में लगभग प्रत्येक 28 दिन प्रत्येक एक की दर से परिपक्व होना आरंभ कर देते हैं (जन्म के समय एक स्त्रिलिंग बच्चे की कोशिकाओं में 3,50,000 अपरिपक्व अंड होते हैं। यौनारंभ (puberty) तथा रजोनिवृत्ति (menopause) के मध्य केवल लगभग 375 अंड ही परिपक्व हो पाते हैं। जब प्रत्येक अंड परिपक्व होता है तो वह अंडाशय में फटता है व इस प्रक्रिया को अंडोत्सर्जन (ovulation) कहते हैं तथा तत्पश्चात यह डिम्बवाहिनी नली से होता हुआ उस अंडाशय से गर्भाशय में चला जाता है।

रजोधर्म (Menstruation) की प्रक्रिया :

यह अंड शुक्र (sperm) द्वारा उर्वरित नहीं होता है तो यह अंडाशय को 24 से 48 घंटों के मध्य अपहनासित होना आरंभ कर सकता है तथा अंततः निष्क्रिय रूप से योनि के रास्ते द्रव्य के सामान्य प्रवाह में शरीर से बाहर निकल जाता है। किन्तु उसी समय गर्भाशय एक उर्वरित अंड की प्राप्ति के लिए तैयार हो रहा होता है। हार्मोन गर्भाशय की भीतरी परत को और मोटा बनाते हैं ताकि उर्वरित अंड को स्वःस्थापन के पश्चात पोषित किया जा सके। जब कोई उर्वरन नहीं होता है तो पनुः हार्मोन उद्दीपन करते हैं, जिसके कारण मोटी हुई भीतरी परत विखंडित होती है और योनि से कुछ मात्रा में रक्त प्रवाहित होता है। इस प्रक्रिया को रजोधर्म कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 2.5

1. सही या गलत बताएं :-
   (i) अध्यंड अपसारण से पूर्व शुक्राणु को भंडारित करती है।
   (ii) डारटोस पेशी स्क्रोटम को चार भागों में विभाजित करती है।
   (iii) अंडाशय अंडाणु उत्पन्न करता है।

2. रिक्त स्थान भरिएः
   (i) .... डिम्बवाहिनी नली का मध्य विस्फारित भाग है जहां उर्वरण उत्पन्न होता है।
   (ii) अंडाशय दो हार्मोनों का स्राव करते हैं जिनके नाम हैं .... और .. ..।
   (iii) .... हार्मोन अंड को फाड़ता है और अंड को छोड़ता है।

2.7 तंत्रिका तंत्र (nervous system)

तंत्रिका तंत्र को शारीरिक संबंधी रचना शास्त्र के आधार पर दो भागों में विभाजित किया गया है :

(1) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (central nervous system) – CNS – इसमें शामिल हैं मस्तिष्क और मेरु रज्जु।

(2) परिरेखीय तंत्रिका तंत्र (Peripheral nervous system) -- इसमें शामिल हैं क्रेनियल (cranial) और कशेरुकीय तंत्रिकाएं, स्वायत्त तंत्रिकाएं और गुच्छिका (ganglia)।

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (CNS)

क्रेनियल अस्थि और कशेरुक द्वारा उपलब्ध गुहा में मस्तिष्क और कशेरुक विद्यमान हैं। यह कठोर आवरण मस्तिष्क और कशेरुक के नाजुक बनावट को संरक्षण देती है। मेनिनजिस (meninges) नामक झिल्लियों से मस्तिष्क और कशेरुक को आवरित किया है। अंदर से बाहर की ओर आते हुए सबसे पहले है पायामेटर (piamater), एरकनोइड (arachnoid) और ड्यूरा मेटर (dura matter) हैं। एरकनाइड और पारामेटर के बीच की जगह को सवएरेकानायड स्थान कहते हैं। मेनिनजिस की सूजन को मेनिजाइटिस कहते हैं।

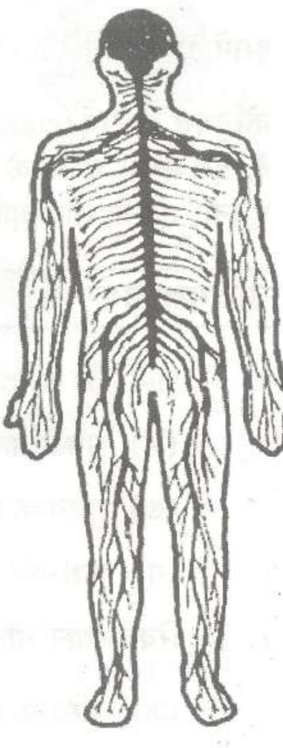

चित्र 2.11

सेरिब्रो-स्पाइनल द्रव (cerelrs spinal fluid - CSF) -- यह कोरायड प्लेक्सस (choriod plexus) से सबअरकनोइड स्थल (subarachnoid space) और मस्तिष्क के वैन्ट्रिकिल्स (ventricles) में उपस्थित हैं। यह मस्तिष्क और मेरुरज्जु के चारों ओर सुरक्षित गद्दे के रूप में कार्य करता है तथा पोषक तत्वों और रसायनिक पदार्थों के विनिमय के लिए माध्यम प्रदान करता है। आम CSF रंगहीन, कोशिका रहित है और इसका pH 7.3 होता है।

मस्तिष्क (Brain) -- वयस्क के मस्तिष्क का वजन 1 से 1.5 कि.ग्रा. के लगभग होता है। जन्म से पहले ही मस्तिष्क के तंत्रकोशिका का कोशिका विभाजन (mitosis) होता है।

मस्तिष्क के आकार में पहले आठ साल में वृद्धि तेज दर से होती है।

मेरु रज्जु (Spinal Cord) -- यह केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (CNS) का विस्तारित भाग है। यह रीढ़ नाल (uerberal canal) में विद्यमान है और फोरामेन मैगनम (Foramen magnum) से आगे बढ़ते हुए मेड्युला ओबलोंगाटा से जुड़ा हुआ है। इसका छोर पतला होता हुआ शंखु बनाता है जिसे कोनस मेड्युलारिस (conu medullaris) कहते हैं जिसमें से नीचे की ओर एक बारीक रेशेदार श्नायु है जिसे फिलम टर्मिनेल (Filum terminala) कहते हैं। इसलिए दूसरी लम्बर कशेरुका (lumbar vertebra) संधि के नीचे सुई डालकर सी.एस.एफ. को खींचा जा सकता है।

मेरुरज्जु से 31 जोड़े शिरा के निकलते हैं, जिनके नाम उनके उत्पत्ति के अनुसार रखे गये हैं।

ग्रैव (cervical)	8
वक्षीय (thoracic)	12
कटि (lumbar)	5
सैकरल (sacral)	5
कोक्सीजियल (coccygeal)	1

परिरेखीय तंत्रिका तंत्र (Peripheral nervous system)

इसमें 12 जोड़ी क्रेनियल शिरा और 31 जोड़े कशे रज्जु शिराएं शामिल हैं।

क्रेनियल शिराएं (cranial nerves) -- मस्तिष्क की निचली सतह से 12 जोड़े शिराएं निकलते हैं। इन सबको संख्या के नाम से पहचाना जाता है इनका काम विशिष्ट इंद्रियां जैसे दृष्टि, स्पर्श, सुनना, सूंघना, ताप आदि का संचालन करना है।

पाठगत प्रश्न 2.6

1. सही और गलत लिखिए :

   (क) सबअरकनोइड स्थल में सेरिब्रोस्पाइनल द्रव्य उपस्थित है।

   (ख) मस्तिष्क तंत्र का जीवन भर कोशिका विभाजन होता रहता है।

   (ग) कशेरज्जु से 31 जोड़े शिराएं के निकलते हैं।

2. रिक्त स्थान भरिए :

   (क) मस्तिष्क और कशेरज्जु '..................' नामक झिल्ली से आवरित रहते हैं।

   (ख) वक्षीय शिराओं की कुल संख्या है .... और कटि शिराओं की कुल संख्या है ....।

2.8 नेत्र

यह दृष्टि का तंतु है इसमें दृष्टि तंत्रिका और आईबाल (eyeball) शामिल हैं।

- नेत्र ग्लोब (eyeball) की सतह एक घनी लचीली झिल्ली से बनी होती है।
- झिल्ली की अग्र भाग पारदर्शी होती है जिसे कोर्निया (cornea) कहते हैं।
- बाकी सब अपारदर्शक होता है उसे श्वेतपटल (sclera) कहते हैं।
- श्वेतपटल का अग्र भाग एक लसीली झिल्ली से आवरित होता है जिसे कंजक्टाइवा (conjuctiva) कहते हैं। पलकों को अंदरूनी सतह तक जाती है।

- श्वेतपटल की अंदरूनी सतह (lining) सुवियल ट्रैक्ट (uveal tract) और यथार्थ दृष्टि शिरा (true visual nerve) जो uveal प्रकाश की किरणों को ग्रहण करके उन्हें परिवर्तित करके उसे दृष्टिपटल तक पहुंचाता है जिसे रेटिना कहते हैं।
- यूवियल ट्रैक्ट (uveal tract) के तीन भाग हैं :
  - — दो पश्च भाग -- रंजनपटल (choroid) और करौनी (ciliary body) भाग, जो श्वेतपटल को अस्तर प्रदान करते हैं।
  - — एक अग्र भाग -- मुक्त गोलाकार डायाफ्राम (diaphragm) -- पुतली (iris)
  - — डायाफ्राम (Iris) का छिद्र होता है प्यूपिल (pupil)
  - — पुतली के पीछे स्थित है द्विउतल पिंड -- क्रिस्टेलीन लेंस (crystaline lens)
  - — अग्र कोठरीनुमा भाग एक स्थल है जो द्रव — एक्युस ह्युमर (aqueous humour) से भरा होता है जो सामने से कोर्निया और पीछे से पुतली और लेंस के अग्र भाग (जो प्यूपिल के सन्मुख है) से।

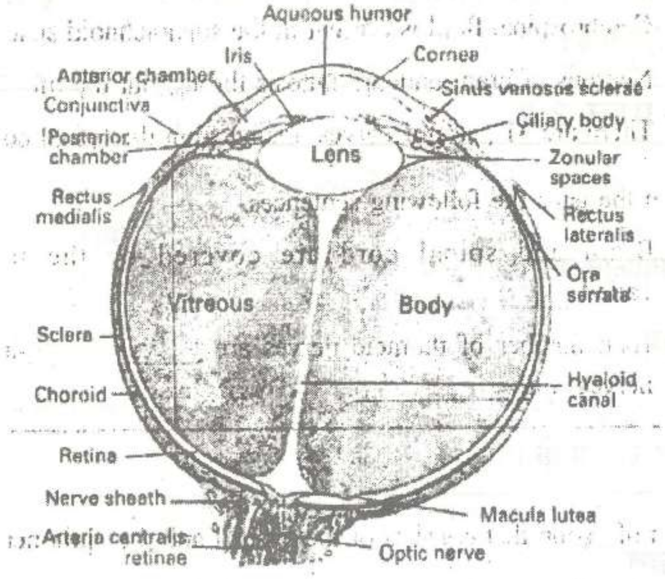

चित्र 2.12 दाहिने आंख का क्षैतिज काट

- लैंस के पीछे एक बड़ा विटरियस चेंबर (vitreous chambes) है जिसमें विटरियस ह्युमर (vitreous humour) है, जिसमें एक अवलेह के समान पदार्थ है जिसमें कुछ कोशिकाएँ और घूमते हुए ल्यूकोसाइट्स है।
- दृष्टिपटल में कई परतें हैं जो कोशिकाओं की तीन तह से बनी होती है। जैसे न्यूरल उपकला रोड्स कोनस और उनके साइनेप्सस।

दृष्टि का क्रिया विज्ञान

- जब रोशनी दृष्टिपटल पर गिरती है तो यह रोड्स (Rods) और कोन्स (cones) के लिए उत्प्रेरक का काम करती है जो इंद्रिय संवेदन पहुँचाती है।
- जिस प्रकार बाह्य पदार्थ के स्पर्श से स्पर्श संवेदन होता है, उसी प्रकार दृष्टिपटल पर रोशनी पड़ने से दृष्टि संवेदन होता है। इस प्रकार बाह्य दुनिया के वस्तुओं का प्रतिरूप, संवेदन कोशिका के द्वारा नेत्र के डायोप्ट्रिक प्रणाली (dioptric system) के द्वारा केन्द्रित किया जाता है।
- जब रोशनी दृष्टिपटल पर पड़ती है, तो दो आवश्यक प्रतिक्रिया होती हैं- प्रकाश रसायनिक (photo chemical) और फोटो इलैक्ट्रिकल (photo electrical) प्रकाश विद्युत।
- इस प्रकाश रसायनिक क्रिया से ही, दृष्टि संबंधित विधि शुरु होती है और प्रकाश विद्युत में बदलाव लाती है। यह ग्रन्थि द्विध्रुविय कोशिकाओं (bipolor cells) से ग्रन्थि कोशिकाओं (ganglion cells) तक प्रेषित होती हैं। यह दृष्टि तंत्रिका के रेशों के साथ मस्तिष्क तक पहुंचती है।

पाठगत प्रश्न 2.7

रिक्त स्थान भरिए :-

(i) डायाफ्राम का छिद्र है ....

(ii) अग्र .... द्रव से अग्र कोठरीनुमा स्थल भरा होता है।

(iii) .... और .... दो आवश्यक प्रतिक्रिया हैं जो दृष्टिपटल पर रोशनी के गिरने से होती हैं।

2.9 कान

कान तीन भागों में विभाजित होता है :

(1) बाह्य कान

(2) मध्य कान

(3) आन्तरिक कान या लेबिरिन्थ

(अ) बाह्य कान

बाह्य कान में शामिल है :

- **(Larga tants) आरिकल या पिन्ना** – इसमें ऑरिकल या बाहरी प्रक्षेपण नुमा रचना होती है जो सिर के एक ओर होती है जिसमें बाह्य श्रवण मिएटस (acoustic meatus) होता है।
- **(Larga tants) बाहरी श्रवण नाल** – यह शंख के नीचे भाग से कर्णपटह झिल्ली (tympanic membrane) तक फैली हुई है। यह सीधी नलिका नहीं है, इसको दो भागों में विभाजित किया गया है :- उपस्थिय भाग और अस्थिय भाग। अतः अगर कर्णपटह झिल्ली को देखना है तो पिन्ना (कर्णम) को ऊपर की ओर पीछे की तरफ और थोड़ा बगल की ओर खींचना पड़ता है जिससे दोनों भाग एक रेखा में आ जाएँ।
- **कर्णपटह झिल्ली** (tympanic membrane) – यह बाह्य ध्वनि नाल और मध्य कान के बीच दीवार (partition) का काम करता है।

(ब) मध्य कान (middle ear)

इसमें अस्थिकाएँ, कर्णपटह झिल्ली से अंडाकार झरोखे और आन्तरिक कान के द्रव ध्वनि तरंगों को संवार्धित करती हैं।

मध्य कान में तीन अस्थिकाएँ हैं :

(1) मेलियस (malleus)

(2) इनकस (incus) (भीतरी हड्डी)

(3) स्टेपिस (stapes)

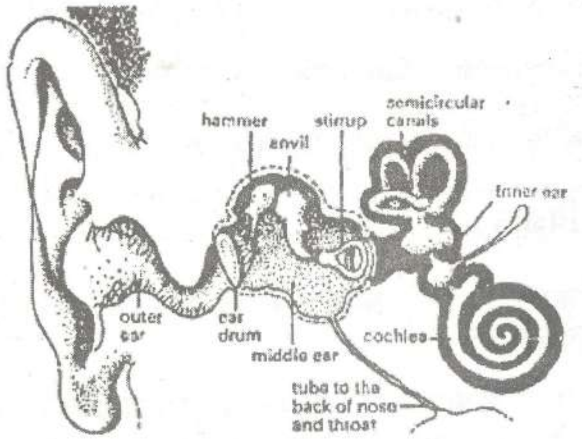

चित्र 2.13 बाहरी कान, मध्य कान और (pharyngolympanic) नाल अग्र भाग

(स) **आन्तरिक कान या लेबिरिन्थ** (labyrinth) –सुनने और संतुलन के लिए आन्तरिक कान बहुत आवश्यक इन्द्रिय है। इसमें अस्थिय या झिल्लीय लेबिरिन्थ (membranous lbyrinth) शामिल हैं।

अस्थिय लेबिरिन्थ

इसके तीन भाग होते हैं।

- प्रघाणत (vastibule) – यह लेबिरिन्थ का मध्य कक्ष होता है।
- अर्धगोलाकार नाल – यह संख्या में तीन होती हैं, बगल, पीछे और उत्कृष्ट, और समतल में एक दूसरे से ९०° पर होती हैं।
- कर्णवत (cochlea) – अस्थिय कर्णवर्त एक घुमावदार नाल है जिसके तीन भाग हैं :
  (1) स्केला प्रधाण (scala vestibuli)
  (2) स्केला टिम्पेनी (scala tympani) या झिल्लीदार
  (3) कर्णवर्त (scala media) या मेम्ब्रेनस काक्लिया (memberanous eichlea))

झिल्लीदार जाल या लेबिरिन्थ (memberanous labyrinth)

यह एक साफ द्रव से भरा होता है जिसे एण्डोलिम्फ (endolymph) कहते हैं जबकि झिल्लीदार और अस्थिय लेबिरिन्थ के बीच का स्थल पेरिलिम्फ (perilymph) द्रव से भरा होता है। इसमें शामिल हैं :

1. कर्णवर्तीय खुली नाल – इसको झिल्लीदार कर्णवर्त या स्केला मिडिआ (scala media) भी कहते हैं।
2. एक छोटी थैली (utrical) और सैक्यूल (saccule)
3. तीन अर्धगोलाकारीय नलियाँ, और
4. एण्डोलिम्फैटिक नली और थैली (saccule)

कान की क्रिया विज्ञान

- पिन्ना वातावरण से ध्वनि संकेत एकत्रित करता है जो बाह्य श्रवण नाल के ज़रिए कर्णपटह झिल्ली पर टकराती हैं।
- कर्णपटह झिल्ली के प्रंकपन को अस्थिका की कड़ियों द्वारा जो कर्णपटह झिल्ली के साथ जुड़ी हैं स्टेपीज़ फुटप्लेट (stapes fortplate) तक पारगमित करता है।
- स्टेपीज़ फुटप्लेट की गति से लेबिरिन्थन द्रव के दाब में बदलाव आता है जो बेसिलर (basilar) झिल्ली को गतिमय करती हैं। इससे कोर्टिइंद्रिय की बाल कोशिकायें प्रेरित होती है।
- यह बाल कोशिकाएँ ही ट्राँसड्यूसर (transducers) का कार्य करती हैं और यांत्रिक ऊर्जा को वैद्युत आवेग में बदलती हैं, जो श्रव्य तंत्रिका (auditary nerve) के साथ चलती है।

- इसलिए सुनने की क्रिया विधि को मोटे तौर पर विभाजित किया जाता है-
  - ध्वनि का यांत्रिक संवहन (conductive apparatus)
  - यांत्रिक ऊर्जा को वैद्युत आवेग में बदलना (कर्णवर्त (cochlea) की इन्द्रीय प्रणाली)
  - वैद्युत आवेग का मस्तिष्क तक संवहन (शिरा संबंधी मार्ग, neural pathway)

पाठगत प्रश्न 2.8

रिक्त स्थान भरिए

(i) कान को तीन भागों में विभाजित किया गया है :

...................., ... और ....

(ii) ...., बाह्य ध्वनि नाल और मध्य कान के बीच दीवार का काम करती है।

(iii) मध्य कान की तीन अस्थिकाएँ हैं ...., ..., ..., ।

(iv) कर्णवर्त के तीन भाग हैं : ...., ..., और ....

(v) झिल्लीदार लेबिरिन्थ में .... अर्धगोलाकारीय नाल हैं।

(vi) झिल्लीदार लेबिरिन्थ .... नामक साफ द्रव से भरा होता है और झिल्लीदार और अस्थिय लेबिरिन्थ के बीच का स्थान .... से भरा होता है।

2.10 पाठांत प्रश्न

1. पाचन तंत्र का चित्र बनाइए और पाच्य भोजन का अवशोषण विस्तार से बताइए।
2. लघु में विवरण कीजिए :-

फेफड़े

रक्त

मूत्र तंत्र

प्रोस्ट्रेट ग्रंथी

2.11 पाठगत प्रश्नों के उत्तर

2.1

1. (i) पैरोटिड, सब-मेण्डिब्युलर, सब लिंगुअल
   (ii) क्रमांकुचक
   (iii) ग्रहणी, मध्यांत्र, इलियम

2. (i) सही (ii) गलत (iii) सही

2.2

1. (i) रेशेदार, गोबलेट
   (ii) नासिका ग्रसनी
   ओरोग्रसनी
   कंठीय ग्रसनी
   (iii) ध्वनि
   (iv) टाइडल आयतन (tidal volume)
   (v) आक्सीहीमोग्लोबिन
   (vi) बाइकार्बोनेट और कार्बोक्सीहिमोग्लोबिन

2.3

1. (i) लाल रुधिर कणिका (R.B.C), श्वेत रुधिर कणिका (WBC), कणिका और प्लेटलेटस
   (ii) 12-16 ग्राम/100ml. और 14-18 ग्राम/100ml.
   (iii) डायस्टोल और सिस्टोल
   (iv) 72 और 80

2. (i) सही (ii) सही (iii) गलत
   (iv) गलत (v) गलत (vi)सही

2.4

1. गुर्दे के दो कार्य हैं :
   (i) छनित कोशिका का उत्पादन करना।

(ii) शरीर में कैल्शियम स्तर को बनाए रखना।

2. गुर्दे का मूल प्रकार्यात्मक इकाई है वृक्काणु।

3. मूत्र तंत्र के अपशिष्ट पदार्थ है जैसे यूरिया, यूरिक अम्ल, क्रिएटिनिन, प्यूरीन पदार्थ, कीटोन पदार्थ, हार्मोन्स के व्युत्पत्ति और ड्रग्स की व्युत्पत्ति

2.5

1. (i) सही (ii) गलत (v) सही (iv) सही

2. (i) एमप्यूला (ampulla)

(ii) इस्ट्रोजन और प्रोजेस्ट्रोन

(iii) ल्यूटेनाइजिंग हार्मोन (LH)

2.6

1. (i) सही (ii) गलत (iii) सही (iv) गलत

2. (i) मेनिन्ज़ेस

(ii) 12, 5

2.7

(i) प्यूपिल

(ii) एकुअस ह्युमर (aqueous humour)

(iii) प्रकाश रासायनिक और प्रकाश वैद्युत

2.8

(i) बाहरी कान, मध्य कान और आन्तरिक कान

(ii) कर्णपटह झिल्ली

(iii) मेलियस, इनकस, स्टेपिस

(iv) स्केला प्रथाण, स्केला कर्णपटह, स्केला मिडिआ या झिल्लीदार कर्णवर्त

(v) तीन

(vi) एण्डोलिम्फ, पेरिलिम्फ।

3

होम्योपैथी का इतिहास

3.1 परिचय

होम्योपैथी, चिकित्सा प्रणाली एक जर्मन चिकित्सक डा. क्रिश्चियन फ्रेडरिक सेमुऐल हैनिमेन (Dr. Christian Fedrich Samuel Hahnemann) द्वारा आरम्भ की गई थी। उन्होंने 88 वर्ष के लंबे व उपयोगी जीवन का योगदान दिया जिससे इस चिकित्सा की नई प्रणाली से रोग युक्त मानव जीवन को अत्यधिक लाभ हुआ।

इस पाठ में, डा. हैनिमेन के जीवन की एक लघु रूपरेखा दी गई है और यह भी बताया गया है कि उन्होंने होम्योपैथी जो उपचार के लिए एक उत्तम प्रणाली है, इसकी खोज कैसे की थी।

3.2 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के पश्चात आप समझ पाएंगे।

- डा. हैनिमेन के जीवन के बारे में।
- 'उपचार का नियम' क्या है, इसका आरंभ कैसे हुआ।
- होम्योपैथी क्या है और उसकी खोज कैसे हुई।
- होम्योपैथी चिकित्सा की एक वैज्ञानिक प्रणाली और कला है ।

3.3 डा. हैनिमेन की जीवनी (Biography of Dr. Hahnemann)

होम्योपैथी के जन्मदाता, किश्चियन फ्रेडरिक सैमुऐल हैनिमेन का जन्म 10 अप्रैल 1755 में जर्मनी के सबसे सुन्दर (मेंसिन शहर) के सेक्सोनी निर्वाचन क्षेत्र में हुआ था। वह अपने पिता किश्चियन

गौटफ्राईड हैनिमेन गौटफ्राईड हैनिमेन, जो एक चीनी मिट्टी के कारखाने में पेंटर (painter) का काम करते थे, उनकी तीसरी संतान थे।

12 वर्ष की उम्र में सेमुऐल हैनिमेन को 20 जुलाई 1767 को शहर के एक स्कूल में दाखिला कराया गया जहां उन्होंने कुछ वर्ष बिताए। गरीबी के कारण उन्हें कुछ समय के लिए स्कूल छोड़ना पड़ा परन्तु उसके बाद उन्हे नामी प्रिंस स्कूल में दाखिला मिला क्योंकि स्कूल के अध्यक्ष (Rector) हैनिमेन को बिल्कुल अपनी ही संतान के समान प्यार करते थे। स्कूल की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात, 20 वर्ष की उम्र में उन्होंने लेपज़िग विश्वविद्यालय में दाखिला लिया। पढ़ते वक्त उन्हें कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा, उन्होंने अपनी कमाई के लिए फ्रेंच और जर्मन भाषा की पढ़ाई की और अन्य भाषा की पुस्तकों का अनुवाद किया। इस बीच वे कई भाषाओं के ज्ञाता बन गए जैसे -- ग्रीक, लेटिन, इटैलियन अरबी, अंग्रेजी, स्पेनिश आदि।

चिकित्सा में उच्च शिक्षा प्राप्त करने वे लेपज़िग से वियेना (vienna) गए। तत्पश्चात उन्हें मानदेय आधार पर ट्रांससिलवानिया के गवर्नर का पारिवारिक चिकित्सक और पुस्तकालय का अध्यक्ष नियुक्त किया गया, यहां उन्हें संगोत्र विज्ञान के बार में ज्ञानवर्धन करने का मौका मिला, जो उनके भविष्य के कार्यो में अत्याधिक लाभदायक साबित हुआ। एक वर्ष और पांच महीने के लिए अपनी चिकित्सा की पढ़ाई करने, वे इरलांजन विश्वविद्यालय गए। अगस्त 1779 में उन्हें एरलेंगेन विश्वविद्यालय द्वारा चिकित्सा में डाक्टरेट (एम.डी.) की डिग्री से सम्मानित किया गया उनके शोध का विषय था : " (A consideration of thetiology and therapeutics of spasmodic affections)"

हैनिमेन ने अपना डाक्टरी अभ्यास शुरू किया। उनकी रसायनिक शास्त्र में रुचि और अध्ययन उन्हें हैसलर फार्मेसी के संपर्क में लाया, जहाँ उनका हैसलर की पुत्री से परिचय हुआ और जिससे उन्होंने 1782 में 17 नवम्बर को विवाह किया।

परन्तु उस समय चिकित्सा संबंधी अराजकता का प्रचलन था। वे उस समय के अधूरे, अस्पष्ट चिकित्सा के ज्ञान से असंतुष्ट थे।

उन्होंने एक बहुत ही कड़वे अनुभव का सामना किया था, जिससे उन्होंने उस समय के अवैज्ञानिक चिकित्सक उपचार से असंतुष्ट होकर और अनैतिक पतन को देखकर डाक्टरी अभ्यास को छोड़ दिया। असल में उस समय डाक्टरी अभ्यास के लिए कोई सिद्धांत नहीं थे। उस समय की प्रचलित प्रणाली ने उन्हें बहुत ही निराश किया था।

"डाक्टरी अभ्यास को त्यागने के पश्चात, उन्होंने अपनी रोज़ी रोटी के लिए साहित्यिक कार्यों पर अपने आप को केन्द्रित किया। अंग्रेज़ी की वैज्ञानिक पुस्तकों का उन्होंने अनुवाद प्रारम्भ किया। 1790 में सत्य की खोज करते वक्त उन्हें एक रोशनी सी दिखाई पड़ी जब वह अंग्रेजी पुस्तक क्यूलन की मैटिरिया मेडिका का अनुवाद जर्मन भाषा मे कर रहे थे, तब उनके ज़हन में 'समानता के नियम' का विचार आया जिससे वे होम्योपैथ की खोज कर सके, और होमियोपैथी के जन्म वर्ष 1796 में उन्होंने 'आरोग्य के नियम' (Law of Cure) की सार्वजनिक घोषणा की।

1805 में उन्होंने (Medicine of Experience) (जिसमें होम्योपैथी के सिद्धांत है) को प्रकाशित किया और आरगेनान का पहला संस्करण आरगेनान ऑफ रेशनल आर्ट ऑफ हीलिंग (Organon of Rational Art of Healing) 1810 में प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक में उन्होंने होम्योपैथी की विधियाँ और धारणाओं की रूपरेखा और स्पष्टीकरण का उल्लेख किया है और उपचार की अन्य प्रचलित विधियों, विशेषकर वह प्रबल विधि जिसे वह एलोपैथी कहते थे, की कटुता के साथ आलोचना की है।

आरगेनोन के पहले संस्करण का संकेत था, मास्टर हैनिमेन के विरुद्ध तीव्र संग्राम की शुरुआत। उस समय के भिन्न चिकित्सक संबंधी दैनिक पत्रों ने उन पर प्रहार किए। अज्ञानी, कुवैध और अनेक नकारात्मक विशेषणों का उनके लिए प्रयोग हुआ। परन्तु, हैनिमेन बिलकुल भी हतोत्साहित नहीं हुए, अपने कार्य को जारी रखा और 'मेटिरिया मेडिका' के कई संस्करण प्रकाशित किए (कुल 8 संस्करण)। जिसमें पहला 1811 में प्रकाशित हुआ था और तत्पश्चात संस्करणों में सब प्रकार के मुमकिन परिवर्तन किए गए।

जून 1821 में, ऐलोपैथ, फार्मेसिस्ट और सरकारी अधिकारियों के विरोध के मध्य कोइथेन के ड्यूक फर्दीनांद ने हैनिमेन को इज़ाजत दी कि वह कोइथेन में रहें और होम्योपैथी का अभ्यास करें। इसी जगह से वे परामर्शदात्री समिति के सभासद चुने गए।

1828 में, हैनिमेन की प्रसिद्ध साहित्य : "दीर्घस्थायी रोग :- उनकी प्रकृति और होम्योपैथिक उपचार" (Chronic Diseases : Their nature and Homoeopathic Treatment) का प्रकाशन हुआ।

48 साल के सुखद विवाहित जीवन के पश्चात, उनकी पत्नी का देहांत 31 मार्च 1830, में हुआ। फिर चार वर्ष पश्चात 1835 में, उन्होंने एक खूबसूरत फ्रेंच महिला के साथ गठबंधन किया जो कि एक कवयित्री, अमीर और बहुत प्रसिद्ध थीं। उसी वर्ष वे फ्रांस गए और अपनी दूसरी पत्नी के सक्रिय प्रभाव से उन्हें पेरिस में अभ्यास करने की अनुमति मिल गई। फ्रांस में, हैनिमेन को अपने सालों की परीक्षा और भुखमरी का प्रतिफल मिला। उनको नाम, प्रसिद्धि, पैसा और शांति पेरिस में ही मिली।

हैनिमेन विस्तृत शोध कार्य में व्यस्त रहे, वे अपनी अंतिम सांस तक चिकित्सा प्रणाली में सुधार लाते रहे जिससे कि अस्वस्थ मानव जाति को सरलता से उपचार मिलता रहे। वे आरगेनन की अंतिम संस्करण, यानि 6 संस्करण, की हस्तलिपि 1842 में समाप्त कर सके, जिसे उन्होंने नवीन, परिवर्तित परन्तु परिपूर्ण बताया, इस समय वह 87 वर्ष के थे।

असमतल और कड़े वातावरण में इस लम्बी यात्रा का अंत 2nd जुलाई 1843 को प्रातः 5 बजे हुआ, जब हैनिमेन ने 88 वर्ष की परिपक्व उम्र में अपनी अंतिम साँस ली।

3.3 उपचार के नियम की खोज

डा. क्रिश्चियन फ्रेडरिक सैम्युल हैनिमेन को 1779 में इरलानजेन विश्वविद्यालय (erlangen

university) द्वारा चिकित्सा के डाक्टर (M.D) की माननीय डिग्री से सम्मानित किया गया। उन्होंने अपनी चिकित्सा का अभ्यास प्रारम्भ किया परन्तु उस समय की अधूरी एवं अस्पष्ट चिकित्सा ज्ञान से वे असंतुष्ट थे। इस प्रकार के अवैज्ञानिक चिकित्सा उपचार से हतोत्साहित होकर, उन्होंने महसूस किया कि चिकित्सा को, पुनर्जीवन की अत्याधिक आवश्यकता है। रोगी का उपचार करते वक्त, जो दवाई दी जाती है, वह मृत्यु भी दे सकती है या नए असर दिखाती है और अंत में उन्होंने डाक्टरी अभ्यास छोड़ दिया। वे इस बात में पूर्ण विश्वास करते थे कि भगवान ने रोगियों का उपचार करने का जरुर कोई सरल उपाय बनाया होगा। (उपचार विधि की अनिश्चितता और दृढ़ नियमों के अभाव ने उन्हें निराश किया)

डा. सैम्युल हैनिमेन ने डाक्टरी अभ्यास छोड़ने के बाद, अपनी रोज़ी रोटी कमाने के लिए अपनी बहुमुखी प्रतिभा के कारण और विभिन्न भाषाओं मे प्रवीण होने के कारण, विभिन्न वैज्ञानिक और चिकित्सा संबंधी पुस्तकों का अंग्रेजी भाषा से अन्य भाषाओं में अनुवाद किया।

1790 की, वह शुभ घड़ी, जब हैनिमेन ने डा. क्यूलेन के 'मैटिरिया मेडिका' को अंग्रेज़ी से जर्मन भाषा में अनुवाद किया, इस वक्त को ही 'उपचार के नियम' की खोज की तिथि मानी जा सकती है। डा. क्यूलेन लंदन यूनिवर्सिटी में चिकित्सा के प्रध्यापक थे, और उन्होंने मेटिरिया मेडिका पर लगभग 20 पृष्ठ लिखें हैं पेरुवियन छाल (सिनकोना) - (Perivian Bark - Chinchona) के औषधि गुण के बारे में। डा. हैनिमेन का ध्यान इस कथन ने बाँध लिया कि इससे मलेरिया का उपचार होता है क्योंकि यह अत्यधिक कड़वी थी और पेट पर इसका असर होता था।

यह जानने के लिए कि उसका सही असर कैसे और किस प्रकार होता है उन्होंने कुछ अनोखा ही किया। उन्होंने थोक में अपक्व सिनकोना का रस कुछ दिनों के लिए दो बार लिया। उन्हें इस बात ने अचंभित किया, कि उनको मलेरिया बुखार के लक्षणों के समरुप ही लक्षणों ने प्रहार किया। इस अप्रत्याशित नतीजे ने उन्हें प्रोत्साहित किया और उन्होंने अपने ऊपर और अन्य स्वस्थ व्यक्तियों पर समान प्रयोग किए। अन्य दवाइयों के साथ जिनका कई बीमारियों के लिए रोग थमने की क्रिया पूर्ण रूप से स्थापित हो चुकी थी, उन्होंने पाया कि स्वस्थ्य व्यक्ति में भी दवाइयाँ वही लक्षण दिखाती हैं जो रोगयुक्त व्यक्तियों में हैं।

इससे वे इस नतीजे पर पहुँचे कि दवाइयाँ रोग को इसलिए ठीक कर पाती है क्योंकि स्वस्थ व्यक्तियों में भी समान लक्षण उत्पन्न करती हैं। होम्योपैथी का पूरा कार्य ही इस सिद्धांत पर निर्धारित है। दवाई की समझ और शोध यह एक बहुत ही क्रांतिकारी पहलू है।

1796 में, अपने पहले प्रयोग के 6 वर्ष के पश्चात, उन्होंने ह्यूफलैंड पत्रिका ग्रन्थ के भाग 3 और 4 (Hufeland's Journal Vol - II Part 3 and 4) में अपना लेख प्रकाशित किया - "An eassay on a New principle for Ascertaining. The curative powers of Drugs and some examinations of the previous principle" "निश्चित करने के नए सिद्धांत पर एक निबंध। ड्रग्स के आरोग्यकर क्षमता और पुराने सिद्धांतों की कुछ जाँच"।

फिर उन्होंने अपना नया मत समक्ष रखा जो कि समान को समान आरोग्य करता है (similia similibus curantur) – सिमिलिया सिमिलिबस क्यूरेंटर) जो पुराने मत के विपरीत था कि प्रतिकूल ही प्रतिकूल को आरोग्य करता है (contraria contrarics curantur कान्ट्रिया कान्ट्रेरिस क्यूरेंटर)

1796 को होम्योपैथी का जन्म वर्ष कहा जाता है। सिमिलिया सिमिलिबस क्यूरेंटर से तात्पर्य है, उपचार में दवाई वही कृत्रिम रूप से उत्पादित रोग के लक्षण को प्रेरित कर सके, जो पूर्व से अधिक शक्तिशाली और समान हो, जिससे पूर्व का उपचार हो सके-समान के रूप समान से (simila similibus)।

3.4 होम्योपैथी – विज्ञान और कला

विज्ञानः

होम्योपैथी, दवाई की वैज्ञानिक प्रणाली है क्योंकि –

- यह ज्ञान का संचित निकाय है, जो व्यापक नियम को स्थापित करता है जो स्वस्थ और बीमारियों में कुछ प्रत्यक्ष लक्षणों के घटित होने को नियंत्रित करता है।
- यह दो क्रमिक घटनाओं के बीच की कड़ी को स्थापित करता है जैसे – रोग और दवाई की घटना।
- रोगी के ऊपर होम्योपैथिक दवाइयों की क्रिया के ऊपर उसके असर की भविष्यवाणी, निर्धारित होती है। रोगी के बारे में विस्तार से जानकारी, उपचार का ज्ञान और नियमों की समझ तथा स्वास्थ्य और रोग के विभिन्न स्तर में उनकी व्यक्तता।
- यह प्रकृति के आरोग्य के नियम पर आधारित है, जो वैज्ञानिक नियमों के अपेक्षित लाक्षणिक विशिष्टताओं से परिपूर्ण है। नियम जिसको न्यायोचित किया है आगमनात्मक (induction), नियमनात्मक और प्रमाणीकरण से।
- इसके पश्चात् है वैज्ञानिक नियम जैसे निरीक्षण, सामान्य नियम, प्रमाण और विश्लेषण।
- यह उसके प्रयोग से होने वाले असर की भविष्यवाणी कर सकता है।

कला :

होम्योपैथी में कला है उसे पाने की :-

- रोगी के सहने के तत्व में
- सहने के लक्षण पूर्ण रूप से, प्रशिक्षित निरीक्षण के विधि के द्वारा, तथा रोगी, उसके साथी, संबंधी आदि से साक्षात्कार करने के बाद दवाई को निर्धारित करना।

- हर रोगी के व्यक्तित्व का ध्यानपूर्वक अध्ययन करना। उसका शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक अध्ययन करना। इसमें डाक्टर की कला निहित है कि वह रोगी का विश्वास जीतने में सफल हो और मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक लक्षणों को एकत्रित कर सके। इसमें सामान्य वातावरण और रोगी के आस-पास के निरीक्षण की कला निहित है जो केस को लेने और उपचार करने में मदद करती है क्योंकि होम्योपैथी समान लक्षण की एक औषधिशास्त्र विधि है और निरीक्षण उसकी सफलता की कुंजी है।

होम्योपैथी व्यक्तिवाद की एक कला है। रोगी का व्यक्तिवाद करना ही उपचार का आधार है क्योंकि उपचार लिखने में घरेलू शब्दों का कोई महत्व नहीं होता है। होम्योपैथी के विज्ञान को ओर प्रयोग में लाने के लिए होम्योपैथ की कला को सीखना चाहिए।

पाठगत प्रश्न 3.1

1. रिक्त स्थान की पूर्ति करो-
   (i) होम्योपैथी की खोज .... ने की।
   (ii) होम्योपैथी का जन्म वर्ष है ....।
   (iii) (क) होम्योपैथी के संस्थापक की जन्म तिथि है .... और मरण तिथि है ....।
   (ख) और्गेनोन की पहली संस्करण के प्रकाशन की तिथि है .... और और्गेनोन को 6 संस्करण के हस्तलिपि के समापन की तिथि है ....।
2. निम्न के लिए दो कारण दीजिए :-
   (i) होम्योपैथी एक विज्ञान है।
   (ii) होम्योपैथी एक कला है।

3.5 सारांश

चिकित्सा के इतिहास में 10 अप्रैल, 1955 एक महत्वपूर्ण दिन है क्योंकि इस दिन होम्योपैथी के संस्थापक डा. क्रिश्चियन फ्रेंडरिक सैम्युल हैनिमेन का जन्म हुआ था।

1790 में, क्यूलेन मैटीरिया मेडिका का अनुवाद करते वक्त, उन्हें इस बात पर असंतोष था कि सिनकोना की छाल मलेरिया का उपचार इसलिए करती है क्योंकि कड़वी होती है और पेट में विषैले पदार्थ उत्पन्न करती है। अतः उन्होंने कई प्रयोग किए और सिनकोना रस की बूंदें स्वयं ही लीं। अंत में, उन्हें यह देख कर आश्चर्य हुआ कि मलेरिया के लक्षण उनमें भी उत्पन्न हो गए।

अतः उन्होंने यह खोजा कि वही पदार्थ अपक्व रुप में उन लक्षणों का निदान कर सकता है जो स्वस्थ मनुष्य में लक्षण उत्पन्न कर सकता है। इसे आरोग्य का नियम कहते हैं 'सिमिलिया सिमिलिबस क्यूरेंटर' अर्थात् समान का उपचार समान से ही होता है। यह नियम, उपचार में होम्योपैथी को एक वैज्ञानिक प्रणाली बनाता है।

3.6 पाठांत प्रश्न

1. होम्योपैथी की खोज कब और कैसे हुई ? होम्योपैथी का जन्म वर्ष कौन सा है ? संक्षिप्त में लिखिए।
2. "होम्योपैथी एक विज्ञान एवं कला भी है" लघु स्पष्टीकरण कीजिए।

3.7 पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1. (i) क्रिशचियन फ्रेडरिक सैम्युल हैनिमेन

   (ii) 1796

   (iii) 10 अप्रैल 1755 और 2 जुलाई 1843

   (iv) 1810 और 1842

2. होम्योपैथी एक विज्ञान है क्योंकि :

   (i) यह कुछ नियमों और सिद्धांतों पर आधारित है (निरीक्षण, सामान्यकरण, प्रमाण और विश्लेषण)

   (ii) यह आरोग्य के प्राकृतिक नियम पर आधारित है।

   (iii) होम्योपैथी एक कला है क्योंकि :-

   (क) रोगी के कष्टों के कारणों का मूल्यांकन करती है।

   (ख) रोगी के लक्षणों के सम्पूर्णता को ध्यान में रखना, रोगी और उनके रिश्तेदारों का साक्षात्कार करना, लक्षणों का निरीक्षण करना, यह भी कला है।

4

औषधि के ज्ञान-साधन
(Organon of medicine)

4.1 परिचय

नवीन चिकित्सा उपचार इस धारणा पर आधारित है कि मानव शरीर स्वतंत्र घटकों से बना है ना कि अविभाज्य इकाई से। दूसरी ओर हमारे पारंपरिक पूर्वी देशों के चिकित्सक, मानव शरीर को एक अविभाज्य इकाई मानते हैं। उनके अनुसार, मानव शरीर का कोई भी अकेला भाग स्वस्थ या अस्वस्थ रह सकता है। उनका ध्येय मनुष्य का उपचार करना था ना कि रोग का। होम्योपैथी का ज्ञान इसी स्वतःसिद्ध सत्य पर आधारित है। रोग, असल में अनिवार्य नहीं है। अगर प्रकृति के नियमों का पालन किया जाए तो आसानी से स्वास्थ्य की परिरक्षा और सामान्य स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर सकते हैं। डा. हैनिमेन ने यह प्रमाणित किया कि ड्रग्स (औषधि) का प्रयोग स्वस्थ जागरूक मानव शरीर पर किया जाए तो उसका प्रभाव मस्तिष्क, भावना और सामान्य स्वस्थ शरीर पर होता है और उसका प्रभाव लक्षणों और प्रकार से व्यक्त होता है, जो रोग की ओर ले जाते हैं। उन्होंने यह भी पाया कि ड्रग्स को अगर नियंत्रित क्षमता में दिया जाए तो वे मानव शरीर में होने वाले समान रोगों को रोक लेते हैं या ठीक कर देते हैं। असल में होम्योपैथ का दर्शन-ज्ञान, हैनिमेन के काम के विभिन्न पहलुओं की सच्ची व्याख्या और स्पष्टीकरण है, जिस पर दृढ़ व्यापक नियमों संबधित होम्योपैथ चिकित्सा विधि आधारित है।

4.1 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप समझ पाएंगे--

- होम्योपैथी के मूल सिद्धांत
- स्वास्थ्य, रोग, उपचार और जीवन संबंधी शक्ति क्या हैं ?

- होम्योपैथिक दवाइयों की क्रिया।
- रोगी का व्यक्तिगत विवरण (case taking)।
- शमनं और निरुद्ध करना ? होम्योपैथी के क्षेत्र का अर्थ और उसकी सीमाएं।

4.2 होम्योपैथी के मूल या मुख्य सिद्धांत

हर विज्ञान में कुछ मूल सिद्धांत होते हैं, जो पूरी प्रणाली को नियंत्रित करते हैं। चिकित्सा उपचार के विज्ञान में होम्योपैथी के स्वयं मूल सिद्धांत हैं जो बहुत ही विशिष्ट है और अन्य चिकित्सा विज्ञान प्रणालियों से भिन्न हैं।

होम्योपैथी के सात मुख्य सिद्धांत हैं :

1. समरूपता का नियम (Law of similia)
2. सरलीकरण का नियम (Law of simplex)
3. न्यूनतम का नियम (Law of minimum)
4. ड्रग के प्रमाण का सिद्धांत (Doctrine of Drug Proving)
5. दीर्घस्थायी रोगों का सिद्धांत (Theory of Chronic Diseases)
6. जीवन संबंधी शक्ति का सिद्धांत (Theory of vital force)
7. ड्रग-शक्ति का सिद्धांत (Doctrine of Drug Dynamization)

4.2.1 समरूपता का नियम (Law of Similia)

होम्योपैथी चिकित्सा की ऐसी प्रणाली है जो समरूपता के निश्चित नियम पर स्थापित है। 'सिमिलिया सिमिलिबस क्यूरेंटर' जिसका अर्थ है कि समान का समान उपचार करता है। होम्योपैथी, एक ग्रीक (greek) शब्द से लिया गया है जिसमें (होम्योस - homoeos) का अर्थ समरूप और 'पैथोस (Pathos)' का अर्थ 'सहना' है। प्रकृति में देखा गया है एक प्रभावशाली शक्ति से, एक कमजोर शक्ति हमेशा के लिए मिटा दी जाती है, जो अपने प्रभाव में पहले वाले के समरूप होती है।

होम्योपैथी प्रणाली, जिसमें दवाई द्वारा रोगी का उपचार किया जाता है अर्थात एक कृत्रिम संक्रामक अभिकर्ता द्वारा, जिसमें यह क्षमता है कि वह समरूप लक्षण उत्पन्न कर सके और जो पहले वाले से अधिक शक्तिशाली हों। होम्योपैथिक औषधि के द्वारा उत्पन्न समान प्रभावशाली लक्षण, कमजोर प्राकृतिक लक्षण को मिटा देते हैं। डा. हैनिमेन ने प्रयोग क्षेत्र में कई शोध कार्य किए और घोषणा की कि यह नियम व्यापक हैं तथा मूल चिकित्सा संबंधी हैं।

4.2.2 सरलीकरण का नियम -- एक उपचार (Law of simplex - The single Remedy)

यह हैनिमेन के व्यावहारिक उपचार के मूल सिद्धांत में से एक है, जिसमें रोगी को एक समय पर

सिर्फ एक ही सरल औषधि पदार्थ दिया जाता है। इसके कई कारण हैं, जैसे :-

मेटिरिया मेडिका में होम्योपैथिक दवाइयों में एकांकी में प्रमाणित की गई है। एक समय पर सिर्फ एक औषधि ही रोगी के लक्षण से समरूप हो सकती है। अगर एक समय पर एक से अधिक औषधि का प्रयोग होता है तो यह निश्चित करना मुश्किल होता है कि कौन सा उपचारिक था और वह भविष्य में निर्देशन का स्रोत बनने में अस्पष्ट हो जाता है।

एक खुराक में एक औषधि से अधिक का मिश्रण, एक नई औषधि को बनाता है, जिसको स्वस्थ व्यक्ति पर संभावित प्रभाव को प्रमाणित करना चाहिए।

जीवन शक्ति, जटिल को निर्देश करने वाले जीवन सिद्धांत, जिससे कि रोगी की जीवन शक्ति में बदलाव और विकार का उपचार एक बार में एक ही होता है।

4.2.3 न्यूनतम का नियम (Law of minimum)

यह भी हैनिमेन के व्यावहारिक उपचार के प्रस्ताव का मूल सिद्धांत था, जिसमें औषधि की खुराक बिलकुल न्यूनतम होनी चाहिए। यह सही चुनी गई औषधि की सर्वाधिक हानि रहित एवं शान्तिकारक प्रभाव प्राप्त करने का प्रमुख कारक है। न्यूनतम खुराक का तात्पर्य है औषधि की मात्रा, जो जीवन शक्ति में सबसे कम उत्तेजना उत्पन्न कर सके और फिर भी बदलाव के प्रभाव को लाने के लिए पर्याप्त हो। यह न्यूनतम मात्रा शांत उपचारिक प्रभाव के लिए उपयुक्त है।

न्यूनतम खुराक के लाभ हैं :

1. अनावश्यक औषधीय अग्रतर से बचा जा सकता है।
2. ड्रग (औषधि) के असामान्य, विशेष और विशिष्ट लक्षण, जो रोगी पर प्रयोग की जाने वाली दवाई की न्यूनतम मात्रा के विशिष्ट क्रिया से उत्पन्न होते हैं।
3. औषधि की न्यूनतम मात्रा किसी भी प्रकार का कार्बनिक क्षति नहीं होने देती और इस ड्रग की लत या ड्रग के प्रभाव का भी कोई खतरा नहीं रहता।
4. आर्न शूल्ज़ नियम (Arndt Schultz Law) न्यूनतम मात्रा की धारणा को प्रमाणित करता है।
5. अगर दवाई का छोटे से छोटा और सटीक उपचारिक प्रभाव देखना है और पूरा लाभ उठाना हो तो खुराक न्यूनतम मात्रा में होनी चाहिए।
6. अल्पतम क्रिया का नियम : वह अल्पतम मात्रा या अति सूक्ष्म मात्रा जो क्रिया के लिए या किसी प्रभाव के लिए आवश्यक है,
7. मात्रा का नियम -- होम्योपैथिक उपचार की क्रिया की गुणता मात्रा की विपरीत अनुपात से निर्धारित होती है।

4.2.4 ड्रग प्रामाणिकता का नियम (Doctrine of drug proving)

होम्योपैथी में सिर्फ उन दवाइयों को दिया जाता है जिनकी औषधीय गुणों की ड्रग प्रामाणिकता के बारे में पता है।

हैनिमेन पहले व्यक्ति थे जो ड्रग प्रामाणिकता में विश्वास रखते थे और ड्रग्स की क्रिया के बारे में जानना चाहते थे।

ड्रग प्रामाणिकता एक क्रमबद्ध जांच-पड़ताल है। हर उम्र के दोनों लिंगों के स्वस्थ मानव शरीर पर रोग उत्पन्न करने वाली दवाइयों की क्षमता (अतः रोग को ठीक करने की क्षमता भी)। विभिन्न दवाइयां सम्पूर्ण रूप से प्रमाणित होनी चाहिए, जिससे उनके उपचारिक गुणों की पूर्ण जानकारी प्राप्त हो और कई रोगों को आरोग्य किया जा सकें।

इन ड्रग्स औषधियों को मानव शरीर पर प्रमाणित करना चाहिए, क्योंकि--

1. जानवरों से आत्मनिष्ठ या मानसिक लक्षण नहीं मिलते हैं।
2. एक ही ड्रग का जानवर पर और मनुष्य पर प्रभाव भिन्न है।
3. हमें ड्रग्स के सूक्ष्म लक्षण और बारीकियां प्राप्त नहीं होंगी।

ड्रग की प्रमाणिकता मानव शरीर पर सिद्ध करनी जरूरी है, क्योंकि--

1. ड्रग द्वारा उत्पन्न लक्षण और रोग द्वारा उत्पन्न लक्षण मिल जाएंगे।
2. रोगी पर ड्रग का प्रभाव और स्वस्थ मनुष्य पर प्रभाव भिन्न होता है।

4.2.5 दीर्घस्थायी रोगों का सिद्धांत (Theory of Chronic Diseases)

हैनिमेन ने देखा कि सबसे अच्छी होम्योपैथिक दवाई देने के पश्चात भी कुछ लक्षण, कुछ समय बाद फिर आ जाते हैं और रोग का उपचार नहीं हो पाता है। इस असफलता ने उन्हें कई दीर्घस्थायी रोगों की जांच करने को प्रेरित किया और 12 वर्ष के प्रयोग और निरीक्षण के बाद वे इस नतीजे पर पहुंचे कि दीर्घ स्थायी रोग का कारण है, दीर्घ स्थायी संक्रामक दुर्गन्ध से (chronic miasmas) जो है सोरा (Psora), सिफिलिस (Syphilis) और सायकोसिस (Sycosis)। सोरा (Psora) कई प्रकार के रोग उत्पन्न करने का मुख्य कारण हैं। यह कई रोगों की माता है और कम से कम आठ में से सात रोगों की जड़ है, जबकि बाकी बची सिफिलिस (Syphilis) और सायकोसिस (Sycosis) उपयुक्त प्रति संक्रामक दुर्गन्ध (antimiasmatic) उपचार से है।

अतः होम्योपैथिक उपचार के लिए दीर्घस्थायी रोग की धारणा जानना आवश्यक है। इस सिद्धांत को आर्गेनन (Organon) के चौथे संस्करण (1829) में डाला गया है।

4.2.6 जीवन शक्ति का सिद्धांत (Theory of Vital Force)

मनुष्य एक त्रि-अस्तित्व का मेल है जिसमें हैं शरीर, मस्तिष्क और आत्मा। यह आत्मा ही जिन्दगी में भिन्न-भिन्न प्रकट होने वाले रोगों की अभिव्यक्ति के लिए उत्तरदायी है और इस आत्मा को ही जीवन शक्ति कहते हैं। यह सिद्धांत 'चिकित्सा के विचार के साधन' -- (Organon of Medicine) 1833 के पांचवें संस्करण में व्यक्त किया गया है। बाद में छठे संस्करण में जीवन शक्ति का मूल सिद्धांत में बदल गया।

स्वस्थ परिस्थितियों में जीव-जन्तुओं में यही जीव शक्ति है जो सामान्य क्रियाओं और संवेदनाओं को बनाए रखती है।

परन्तु जब यही जीवनदायी शक्ति संक्रामक रोग के प्रभाव में मुख्यतः गड़बड़ा जाती है, तब असामान्य संवेदनाएं और क्रियाओं का कारण होती है जो ऊपरी सतह पर प्रकट होती हैं और असामान्य लक्षण और चिह्न के रूप में दिखाई देती है। यह मिलाकर रोग को बनाते हैं। अगर उपचार को स्थापित करना है तो जीवनदायी शक्ति को प्रेरित करके जागृत करना होगा, जिससे आरोग्य लाभ में मदद मिल सके। अगर जीवन शक्ति पूरी तरह से थक चुकी है, कमजोर हो चुकी है तो कोई चिकित्सा मदद नहीं कर सकती क्योंकि जीवन शक्ति इतनी कम हो गई है और कोई भी बाह्य मदद नहीं पहुंच सकती है। जीवन शक्ति की यह धारणा रोग के उपचार के लिए असांसारिक साधन है जो होम्योपैथी को हानि न पहुंचाने वाली और उपचार की तार्किक कला है।

4.2.7 ड्रग शक्ति का सिद्धान्त (Doctrine of Drug-Dynamization)

होम्योपैथी में ड्रग को क्रियाशील बनाने की ऐसी विधि है, जिसमें चिकित्सिक गुण, जो अपक्व स्थिति में प्राकृतिक पदार्थ में छिपे होते हैं, एक अद्‌भुत स्तर तक जागृत किए जाते हैं। होम्योपैथिक क्रियाशीलता एक घटाव की गणितीय, यांत्रिकी विधि है। मापदंड के अनुसार, अपक्व जहरीली दवाई पदार्थ को विलेयता की स्थिति में पहुंचाना, शरीर क्रिया विज्ञान समांगीकरण और चिकित्सा संबंधी सक्रियता और जो होम्योपैथिक आरोग्य दवाई के रूप में हानि नहीं पहुंचाती है। क्रमिक सरसता या घिसाव की विधि से जो होम्योपैथिक फार्माकोपोईया के निश्चित नियम और निर्देश के अनुसार है, इस विधि को किया जाता है।

ड्रग शक्ति गतिशील करने के उद्देश्य :

1. औषधीय पदार्थ को लगातार घटाव की विधि से कम करना जिससे अनचाही दवाई की अधिकता और उसके प्रभाव से बचा जा सके।
2. प्राकृतिक पदार्थ के अपक्व रूप में जो औषधीय गुण छिपे हुए हैं, उन्हें जागृत करना और एक अद्‌भुत स्तर तक उन्हें क्रियाशील बनाना।
3. होम्योपैथी इस बात पर विश्वास रखता है कि जीवन शक्ति अपने रूप में गतिशील है

और जब व्यक्ति रोग से प्रभावित होता है तो उपयुक्त दवाई की गतिशील शक्ति द्वारा ही उपचार हो सकता है।

4. एक अद्‌भुत स्तर तक जितना अधिक ड्रग को गतिशील बनाया जाता है, उतनी ही सक्रिय औषधीय शक्ति होती है।

5. सबसे ज्यादा जहरीले और विद्वेषपूर्ण पदार्थ को भी क्रियाशीलता की विधि से लाभदायक उपचारिक औषधि में बदला जाता है।

6. क्रियाशीलता की विधि से औषधीय रूप से अक्रिय पदार्थ भी रोगी के उपचार के लिए प्रभावी बन जाते हैं। (उदा. साधारण नमक - 'Nat Mur' 'चार्कोल - charcoal - कार्बो वेज - 'carlo veg', 'sand-सिलिका (sand silicea)

क्रियाशील बनाने की विधि :

ड्रग्स को क्रियाशील या शक्तिशाली बनाने की दो विधियाँ हैं:

(1) चूर्णीकरण (Tribuiration) - यह अविलेय पदार्थों के लिए है।

(2) रसीलाकरण (Succussions) - यह विलेय पदार्थों के लिए है।

पाठगत प्रश्न 4.1

1. होम्योपैथी के सात मूल सिद्धांतों के नाम लिखिए ?
2. सिमिलिया सिमिलिबस क्यूरेंटर - (similius similibus curantur) का अर्थ क्या है ?
3. एक समय पर एक दवाई ही क्यों देनी चाहिए। इसके दो कारण बताइए।
4. न्यूनतम खुराक देने के दो लाभ बताइए।
5. ड्रग की प्रामाणिकता मनुष्य पर ही क्यों करनी चाहिए ना कि पशुओं पर, इसके दो कारण बताइए।
6. ड्रग्स की प्रामाणिकता स्वस्थ मनुष्य पर क्यों करनी चाहिए ?
7. कोई तीन दीर्घस्थायी संक्रामक दुर्गन्धों के नाम लिखिए।
8. होम्योपैथिक क्रियाशीलता क्या है ?
9. क्रियाशीलता के दो उद्देश्य बताइए।

4.3 लक्षणों का पूर्ण रूप (Totality of Symptoms)

लक्षणों के पूर्ण रूप से हमारा आशय लक्षणों के कुल योग से नहीं, अपितु यह रोगी का एक बड़ा लक्षण है।

मूलतः डा. हैनिमेन ने जैसे कहा कि "बाहरी प्रतिबिंबित दृश्य रोग के अन्दर का सार है, अर्थात उसके जीवन शक्ति पर प्रभाव का" "Outwardly reflected picture of the internal essence of the disease, that is, of the affection of the vital force."

जब जीवन शक्ति की क्रियाशीलता गड़बड़ हो जाती है तब बाह्य क्रियाशील संक्रामक शक्ति द्वारा यह असामान्य संवेदनाओं और क्रियाओं को उत्पन्न करता है जो बाह्य लक्षण और चिह्न के रुप में प्रतिबिंबित होते हैं और पूर्ण रुप से रोग को बनाते हैं। अतः रोग "चिकित्सक के लिए लक्षण की पूर्णता होती है"।

यह कोई लक्षणों की आकस्मिक गोल माल नहीं है जो बिना किसी कारण या ताल मेल के कारण मिल गया हो। यह कोई संख्यावाचक समूह नहीं परन्तु पूर्णता से तात्पर्य है" केस के सब लक्षण जो तर्कसंगत रूप से एक ताल मेल के साथ पूरे रुप में जिसका कोई स्वरूप हो, व्यक्तित्व हो और समझने मे आसान हो। उदाहरण के लिए, एक चलती हुई मशीन सिर्फ हज़ारों पुर्जों का संख्यावाचक समूह ही नहीं परन्तु यह पुर्ज़े एक नक्शे या ढाँचे के अनुरूप व्यवस्थित हैं या समवेत किए गए हैं, जिससे मशीन को चलाना संभव है। इसी प्रकार पूर्णता भी लक्षणों का समन्वय संयोग है जो रोग का सत्य एवं काल्पनिक चित्र देता है।

4.4 होम्योपैथी में स्वास्थ्य, रोग और उपचार का पहलू (Concept of Health, Disease and cure in Homeopathy)

मानव शरीर सिर्फ माँस, रक्त, अस्थियाँ, पेशियां, शिरा और मस्तिष्क का समूह नहीं है। अगर ऐसा था तो, नवीन बायोकेमिस्ट जीवद्रव्य (protoplasm) की रचना के बारे में जानने पर, उसे प्रयोगशाला में बना लेते। परन्तु ऐसा नहीं कर पाए क्योंकि कुछ अति इन्द्रिया जनित है। जीवन असल में शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का संयोग है। इसी आत्मा को हैनिमेन ने जीवन शक्ति कहा है।

स्वास्थ्य – यह जीवन की वह सामान्य स्थिति है जो विशिष्ट लक्षणों के द्वारा बतलाता है कि स्वस्थ होने की भावना और आरामदायक स्थिति की भावना का कारण है जीवन शक्ति का ताल मेल में होना।

यह, स्थिति शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य की अनुकूल स्थिति है न कि सिर्फ रोग के अभाव की।

रोग – रोग, जीवन के असामान्य रूप में परिवर्तित स्थिति है जिसके लक्षण हैं, अस्वास्थ्य की संवेदना और असुविधा की भावना जो जीवन शक्ति की क्रियाशील अव्यवस्था से उत्पन्न होती है।

उपचार : इसका तात्पर्य रोग के बाह्य द्वितीय वर्ग या भौतिक पदार्थ को हटाना ही नहीं परन्तु जीवन शक्ति की सामान्य क्रियाशीलता को वापस लाना भी है, जिससे प्राणी फिर से सब क्रियाएँ सामान्य रूप से कर सकें और रोगी फिर से स्वास्थ्य की स्थिति में आ जाए।

स्वस्थ स्थिति में जीवन शक्ति, एक क्रियाशील शक्ति है जो प्राणी के सामान्य क्रियाशीलता और संवदेनाओं को नियंत्रित करती है। परन्तु जब भी जीवन शक्ति रोग उत्पन्न करने वाले संक्रामक से प्रभावित होती है तो असामान्य संवदेनाएँ और कार्य करती है, जिसके शरीर के बाह्य भाग में असामान्य चिह्न और लक्षण दिखाई देते हैं, इन लक्षणों की पूर्णता रोग को बनाती है। अतः रोग कुछ भी नहीं अपितु जीवन शक्ति की अव्यवस्थिता हैं। उपचार को पाने के लिए, जीवन शक्ति की मुख्य भूमिका है उत्तम औषधीय रोग की कृत्रिम परन्तु समरूप प्रभाव को ग्रहण, करने की और अन्ततः प्राकृतिक समान परन्तु कमज़ोर रोगों को बाहर निकालने की, जिससे स्वास्थ्य को फिर से प्रत्यर्पण कर सकें। प्रत्यर्पण के लिए जीवन शक्ति को पुनः जागृत करना पड़ेगा।

जीवन शक्ति की धारणा ने होम्योपैथिक समूह को रोगों का अभौतिकी साधन दिया है। इस साधन से रोगों के उपचार ने होम्योपैथी को, बिना हानि और उपचार को तर्क रहित कला, बना दिया है।

4.5 होम्योपैथिक औषधि की क्रिया कैसे होती है ?

हैनिमेन ने होम्योपैथी औषधि की क्रिया प्रणाली का बिलकुल स्पष्ट शब्दों में उल्लेख किया है :"किसी जीव में शक्तिशाली प्रभाव से एक कमज़ोर क्रियाशील प्रभाव स्थायी रुप से मिट जाता है अगर बाद वाला (भिन्न प्रकार का हो) अपने द्वारा उत्पन्न लक्षण, पहले वाले के समान उत्पन्न करता है।"

लक्षणों की सही समानता के आधार पर रोगी को दवाई दी जाती है, इसका प्रभाव अव्यवस्थित जीवन शक्ति पर होता है और समान परन्तु शक्तिशाली औषधीय रोग उत्पन्न होता है, जो कि दवाई की प्रथम क्रिया द्वारा उत्पन्न होता है और यह प्राकृतिक दवाई के समान होता है। जीवन शक्ति सिर्फ औषधीय आरोग्य है। औषधी रोग निम्नलिखित कारणों से क्रमशः कमज़ोर हो जाता है।

1. (i) खुराक की न्यूनतम मात्रा (ii) औषधीय साधन की क्रिया के निश्चित और लघु अवधि से।
2. जीवन शक्ति की द्वितीय उपचारिक क्रिया। क्योंकि ड्रग और रोग के बीच समान रिश्ता है इसलिए जीवन शक्ति अपने आपको तटस्थ कर लेती है और अपनी बढ़ी हुई शक्ति को औषधीय रोग से उभारने की कोशिश करती है।

अंत में एक समय आता है जब जीवन शक्ति दोनों प्राकृतिक और औषधीय रोग से मुक्त हो जाती है और महत्वपूर्ण जीवन की क्रियाएँ करने में समर्थ हो जाती है। इससे, स्वास्थ्य उत्तम पूर्वस्थिति में आ जाता है।

4.6 रोगी का व्यक्तिगत विवरण (Case taking)

परिभाषा : इसका तात्पर्य होता है कि रोगी की शिकायतों का लेखा इस प्रकार से लिखा जाता

है कि रोगी व्यक्ति के रोग चित्र को पूर्ण रूप से दर्शाता है। चिकित्सक लक्षण के पूर्ण रूप को समझने के बाद ही उपयुक्त होम्योपैथिक उपचार लिखता है।

अतः रोगी के उपचार में इस विधि के द्वारा उसके सारे लक्षण (अनोखे एवं सामान्य) एक व्यक्तित्व के रूप में प्रदर्शित होते हैं और सारे शारीरिक, रोग्य (pathological), मानसिक, भावनात्मक बदलाव जो रोग के रहते हुए उभरते है, उन सब का लेखा जोखा किया जाता है।

रोगी अपने कष्टों का ब्यौरा देता है और बिना किसी अवरोध के रोग के कारण का विवरण देता है। कोई भी रुकावट मरीज़ के सोचने की कड़ी में तोड़ ला देती है। उसे तब ही रोका जाए, जब वह दूसरे विषय पर बोलने लगे, और जो असली रोग के लक्षणों से अलग हो। अतिरिक्त जानकारी, रोगी के व्यवहार और अन्य क्रियाओं के बारे में जानने के लिए, उसके दोस्त और रिश्तेदारों से भी ली जाती है। जो जानकारी मिलती है उसे सही प्रकार से संग्रहित करके लिपिबद्ध करनी चाहिए। चिकित्सक तब तक शांत बैठता है जब तक रोगी संबद्ध बयान देता है। किसी प्रकार के ऐसे प्रश्न नहीं पूछे जाते है जो रोगी को किसी आशायुक्त उत्तर की ओर ले जाए।

चिकित्सक यह पता करने के लिए रोगी की जाँच करता है कि रोगी का व्यवहार और लक्षण बदले हुए हैं या नहीं।

रोगी और उसके दोस्तों द्वारा दिए गए कथनों को चिकित्सक बिना किसी भ्रांत धारणा या पक्षपात के क्रमबद्धता के आधार पर अध्ययन करता है। वह उन सब लक्षणों जिसमें उसकी खुद की खोज शामिल है, व्यवस्थित करता है। उसके बाद वह रोगी और उसके दोस्तों से पूछताछ करता है, जिससे कि किसी विशेष जानकारी के बारे में पता लग जाता है, जैसे कारण, संवेदना, स्थिति, विधियाँ, जिससे अकेले लक्षण को आँक सके। अगर जरुरत पड़ी तो स्पष्ट करने के लिए, और प्रश्न करते हैं, जब तक वह इस स्थिति में नहीं आ जाते की रोगी का स्पष्ट चित्र खींच सके, जिससे आरोग्य उपचार के लिए निर्देशक न मिल जाए। लक्षणों के बारे में जानकारी एकत्रित कर संग्रह करके रखने की विधि परवर्ती जांच में भी होगी।

रोग की महामारी की स्थिति में लोगों में बड़ी संख्या में समान लक्षण नज़र आते हैं। ऐसी स्थिति में कुछ शुरू के रोगियों के लक्षणों को लिखा जाता है उसकी विशिष्टता को पहचान कर समझा जाता है। अधिकतर रोगियों में समान उपचार असरदार होता है और इस प्रकार के चुनाव को जीनस स्पिडेमिकस (Genus epidemicus) कहते हैं- जो भी लक्षण किसी भी रोग के लिए लिखे जाते हैं, यह पूरी विधि बहुत ही सच्चाई, ईमानदारी से करनी चाहिए जिससे सफलता हाथ लगे।

व्यक्तिगत विवरण पत्र (case taking proforma)

(I) रोगी का विवरण (Particulars of the patient)

नाम

उम्र

लिंग

पता

धर्म

व्यवसाय

विवाह स्थिति

पहली मुलाकात की तिथि

(II) समय के साथ अपनी शिकायतें बताना। (घटना को तिथि के अनुसार क्रमबद्ध करना)। सबसे नयी घटना, बिल्कुल अंत में आनी चाहिए। यह शिकायतें, स्थिति, संवेदना, प्रकार और समवायी के रुप में पूर्ण होनी चाहिए।

(III) पूर्व इतिहास : वह सारी तकलीफें जो रोगी ने बचपन से सही हैं, जैसे दुर्घटना, टीकाकरण, सर्जरी आदि (क्रमबद्ध आर्डर) में, अगर कोई उपचार पहले लिया गया है।

(IV) पारिवारिक इतिहास :

कोई लत

व्यवसाय

वैवाहिक स्थिति

पोषण

(V) स्त्री रोग या प्रसूति इतिहास

डिलीवरी (प्रसव) की संख्या

डिलीवरी के प्रकार

किसी प्रकार की जटिलता

जीवित बच्चों की संख्या

(VI) मानसिक लक्षण

मस्तिष्क से संबंधित लक्षण

(VII) शारीरिक (सामान्य)

इच्छाएँ

अरुचि

ताप की प्रतिक्रिया

भूख

प्यास

मल

पसीना

नींद

स्वप्न

(VIII) सामान्य शारीरिक जाँच

बनत (built)	–	लसीका गाँठ (lymphnodes)
डेक्यूबिटस (decubitus)	–	रंजनक (Pigmentation)
रक्ताल्पता (anaemia)	–	श्वसन गति (Respiratory rate)
सायनोसिस (cyanosis)	–	नब्ज (Pulse)
क्लबिंग (clubbing)	–	रक्तचाप (B.P)
पीलिया (Jaundice)	–	जीभ

(IX) प्रणाली जाँच (Systemic Examination)

श्वसन प्रणाली (Respiratory System)

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (Central nervous system)

हृदय संचरण तंत्र (cardio vascular system)

उदरीय जाँच (Abdominal examination)

त्वचा

जोड़ और अस्थियाँ

4.7 निंजी विशिष्टता (Individualization)

सबकी जीवन शैली निजी हैं-और कुछ विशेष एवं अनोखे लक्षण होते हैं। डा. हैनिमेन पहले व्यक्ति थे जिन्होंने रोगी को अलग निजी अस्तित्व माना और रोगी और उसकी दवाइयों के निजीकरण की धारणा को शुरू किया। निजी रोगी का सम्पूर्ण रुप में उपचार करना जिसमें उसके सारे अनोखे लक्षणों का विवेचन किया जाता है। दो व्यक्ति एक समान नहीं होते हैं, चाहे वह स्वस्थ हों या रोगी हों। यह विधि होम्योपैथी प्रणाली का महत्वपूर्ण आधार है।

रोगी का निजीकरण :-

इस विधि से मरीज़ को उन लोगों से अलग किया जाता है, जिनको यही रोग होता है। कुछ सामान्य लक्षण और खूबियाँ उन सभी रोगियों में पायी जाती है जैसे "बुखार" में सब का सामान्य से ऊपर तापमान होता है, परन्तु उपचारिक औषधि को चुनने में इसका न्यूनतम महत्व है। परन्तु किसी

रोगी में कुछ न कुछ ऐसे लाक्षणिक और अनोखे लक्षण हमेशा होते हैं जो सिर्फ उस रोगी में ही दिखाई देते हैं। जैसे बुखार में भी, एक मरीज़ जो सूखी, साफ और लाल ज़बान दिखाता है, उसे अधिक प्यास लगती है वह ज्यादा पानी पीता है परन्तु एक समय पर थोड़ा-थोड़ा, उसे अधिक बेचैनी होती है। जबकि दूसरा मरीज परत जमी ज़बान दिखाता है जो पीली, गाढ़ी भूरी, सफ़ेद ज़बान होती है, उसे अधिक प्यास लगती है, वह एक समय पर ज़्यादा पानी पीता है। हर व्यक्ति के लिए उसके विशिष्ट लक्षण के अनुसार ही विशिष्ट उपचार होता है इसलिए चिकित्सक को व्यक्तिगत लक्षणों को पता करने की लगन होनी चाहिए और समरूप लक्षणों के आधार पर आरोग्यकर उपचार को चुनना चाहिए।

दवाई का व्यक्तिगत निजीकरण :

होम्योपैथी चिकित्सा विभिन्न दवाइयों की रोग को आरोग्य करने की शक्ति को पहचानता है, जो एक दूसरे से भिन्न होती हैं। यह महत्वपूर्ण घटक होता है कि उन्हें भिन्न करके उन के प्रभाव के आधार पर प्रयोग करना, और पूर्व शोध करना जिसके बिना औषधि का न्यायिक प्रयोग संभव नहीं है। होम्योपैथी में उपस्थापन का कोई स्थान नहीं है क्योंकि भिन्न दवाइयों की क्रिया भिन्न है।

उदारहण :- दो दवाइयाँ, सेकेल कोर (secale cor) और आर्सेनिक अल्ब (Arsenic alb) - दोनों शीतल हैं। परन्तु सेकेल कोर में मरीज़ सब ओढ़ने के कपड़ हटा देता है, और शीतल वायु चाहता है जबकि आर्सेनिक मरीज़ सब गर्म चीज़े माँगता है और शरीर को ढ़के रहता है। सिर्फ सिर को खुला रखता है। इस प्रकार दोनों अलग हैं। सम्पूर्ण मैटेरिया मेडिका इस प्रकार के व्यक्तिगत निजीकरण पर निर्भर करती है।

होम्योपैथी उपचार की सफलता का आधार है रोगी की यथार्थता पर ड्रग औषधि निजीकरण।

- ऊतकों के विनाश जो किसी चोट के कारण है और जिनका निर्माण करना असमर्थ है।
- जब प्राणी की औषधि के प्रति मुख्य प्रतिक्रिया शक्ति या तो पूरी खत्म हो चुकी है या फिर कोई अवरोध है।
- जहाँ पर औषधीय कारणों से स्वस्थ प्राणी में लाक्षणिक समानता में दृष्टिगोचर उत्पन्न नहीं होता है और ना ही प्रभाव में, जिसमें इस प्रकार के लक्षण दृष्टिगोचर नहीं है।

पाठगत प्रश्न 4.2

1. लक्षणों की सम्पूर्णता से क्या तात्पर्य है ?
2. निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए: स्वास्थ्य, रोग, उपचार
3. व्यक्तिगत विवरण (Case taking) का क्या तात्पर्य है ?

4.8 सारांश

इस पाठ में हमने पढ़ा कि होम्योपैथी के 7 मूल सिद्धांत हैं : समरुपता का नियम, सरलीकरण का नियम, न्यूनतम का नियम, ड्रग के प्रकाण का सिद्धांत, दीर्घस्थायी रोगों का सिद्धांत, जीवन संबंधी शक्ति का नियम, ड्रग-शक्ति का सिद्धांत। जब जीवन शक्ति की क्रियाशीलता में गड़बड़ होती है, तो रोग उत्पन्न होता है, और उसको पुनः स्वास्थ्य की स्थिति में लाना, जिससे कि उपचार हो जाए।

होम्योपैथिक दवाईयों की कार्य करने की विधि इस नियम पर आधारित है – जीवित प्राणी में "एक कमज़ोर क्रियाशील प्रभाव, दूसरे प्रभावी क्रियाशील रोग से, हमेशा के लिए मिट जाता है। अगर बाद वाला (प्रकार में भिन्न), पहले वाले की अभिव्यक्ति के समान है। रोगी का व्यक्तिगत विवरण पत्र भरना सबसे महत्वपूर्ण कार्य है जिसे ईमानदारी और दक्षता से करना चाहिए।

4.9 पाठांत प्रश्न

(1) होम्योपैथी के किन्हीं 3 मूल सिद्धांतों का विवरण कीजिए।

(2) 'लक्षणों की सम्पूर्णता' को संक्षेप में समझाइए।

(3) जीवन शक्ति के संबंध में स्वास्थ्य, रोग और उपचार की धारणा को समझाइए।

(4) रोगी के व्यक्तिगत विवरण को विस्तार में समझाइए।

4.10 पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1

1. होम्योपैथी के सात मूल सिद्धांत हैं-
   - (i) समरूपता के नियम
   - (ii) सरलीकरण के नियम
   - (iii) न्यूनतम के नियम
   - (iv) ड्रग प्रामाणिकता का सिद्धांत
   - (v) दीर्घस्थायी रोग का सिद्धांत
   - (vi) जीवन शक्ति का सिद्धांत
   - (vii) ड्रग क्रियाशीलता का सिद्धांत
2. सिमिला सिमिलिबस क्यूरेंटर

इसका अर्थ है समान ही समान का उपचार करता है। होम्योपैथी में, रोगी का उन होम्योपैथिक दवाईयों से उपचार किया जाता है जो समान लक्षण उत्पन्न करने में समर्थ हैं और जो पहले वाले से शक्तिशाली है। होम्योपैथिक दवाई से उत्पन्न हुए समान शक्तिशाली लक्षणों से कमजोर प्रकृति रोग के लक्षण मिटा दिए जाते हैं।

3. एक समय पर एक दवाई को देने के दो कारण हैं:

(i) किसी एक समय पर सिर्फ एक दवाई ही किसी रोगी की स्थिति में अधिकतम समान हो सकती है

(ii) अगर एक से अधिक दवाई का प्रयोग होता है तो यह निश्चित करना मुश्किल होता है कि कौन सी दवा उपचारिक प्रवृति की है और भविष्य में निर्देश देने के लिए अस्पष्ट हो जाता है।

4. न्यूनतम खुराक देने के दो लाभ :

(i) अनावश्यक उग्रता से बचा जा सकता है।

(ii) दवाई की न्यूनतम मात्रा, कार्बनिक क्षति नहीं होने देती जिससे कि किसी प्रकार की ड्रग की लत या उसके सह प्रभाव का खतरा नहीं रहता।

5. ड्रग प्रामाणिक मनुष्य पर होनी चाहिए ना कि जानवरों पर क्योंकि :

(i) जानवरों में मानसिक लक्षण या आत्मनिष्ठता नहीं होती।

(ii) एक ही ड्रग का प्रभाव जानवरों में और मनुष्यों में भिन्न होता है।

6. स्वस्थ मनुष्यों पर ड्रग की प्रमाणिकता सिद्ध की जाती है, क्योंकि

(i) ड्रग के लक्षण और रोग के लक्षण मिल जाते हैं।

(ii) ड्रग का प्रभाव सामान्य व्यक्ति से रोगी व्यक्ति में भिन्न होता है

7. तीन दीर्घस्थायी मिएसमस (mias ms) हैं : सोरा (Psora), सिफिलस (Syphilis), सायकोसिस (sycosis)

8. जीवन शक्ति : मानव जीवन एक त्रि-अस्तित्व का मेल है जिसमें शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का मेल होता है। यह आत्मा ही जीवन में विभिन्न अभिव्यक्तियों के लिए उत्तरदायित्व है, इसे ही जीवन शक्ति कहते हैं।

9. होम्योपैथिक क्रियाशीलता एक गणित - यांत्रिकी विधि है। घटाव की मापदंडता के अनुसार अपक्व जहरीली दवाई पदार्थ को विलेयता की स्थिति में पहुँचाना, क्रिया विज्ञान समांगीकरण और चिकित्सा संबंधी सक्रियता और क्षतिहीन होती है। इस विधि को दो साधन से किया जाता है- क्रमिक सरसता या घिसाव की विधि से जो होम्योपैथिक फार्माकोपिया के निश्चित नियम और निर्देश के अनुसार है।

10. क्रियाशीलता के दो उद्देश्य

(i) औषधीय पदार्थ को लगातार घटाव की विधि से कम करना जिससे अनचाही दवाई की अधिकता और उसके प्रभाव से बच सके।

(ii) प्राकृतिक पदार्थ के अपक्व रूप में जो औषधीय गुण छिपे हुए है, उन्हें जागृत करना और एक अद्भुत स्तर तक उन्हें क्रियाशील करना।

5

होम्योपैथिक मैटिरिया मेडिका का परिचय

(Introduction of Homeopathic Materia Medica)

रोग मानवजाति से भी पुरातन हैं, अपितु यह पृथ्वी पर जिंदगी जितने ही पुराने हैं। चिकित्सा इतिहास के पुरातन प्रलेख लगभग चार हजार वर्ष पुराने हैं। परन्तु 'लिखाई' की खोज से पहले, दांतों, हड्डियों और शवों के परीक्षण से रोग और उस समय के उपचार, यानि कि पूर्व-ऐतिहासिक युग में किस प्रकार की आरोग्य विधि अपनायी जाती थी, के भरपूर प्रमाण मिले हैं।

चिकित्सा विज्ञान और कला के क्षेत्र में लगातार परिवर्तन हो रहे हैं। पुरानी धारणाएं मिटाई जा रही है और नए तरीकों को ग्रहण किया जा रहा है। 18वीं सदी में चिकित्सा संबंधी प्रथा, विभिन्न उपचारों का मिश्रण थी जिसमें कोई भी निश्चित नियम नहीं था। कुछ लोग विपरीत नियम अपनाते थे। मनुष्य के अंगों/हिस्सो को बीमार माना जाता था और उसी के अनुसार उस हिस्से का उपचार किया जाता था जिससे उस अंग को आराम मिल सके। चिकित्सा के जन्मदाता -- हिप्पोक्रेट्स (460-379बी.सी.) रोगियों का निरीक्षण करते थे ना कि रोग का। परन्तु उनके विचार बहुत कम चिकित्सकों ने अपनाए, उन्हीं में एक होम्योपैथी के जन्मदाता मास्टर हैनिमेन थे।

हैनिमेन ने अपनी मेडिकल की शिक्षा समाप्त करके, 1779 में एम.डी. की डिग्री प्राप्त की और शीघ्र ही अभ्यास शुरू कर दिया। जल्दी ही उन्हें उस समय की चिकित्सा पद्धति में अरुचि उत्पन्न हो गई, जहां सूजन के उपचार के लिए नस काट कर रक्त को बहाते थे या जोंक द्वारा रक्त् चूसवा देते थे (letting और Leaching)। पेट की गड़बड़ के लिए वमन विधि का प्रयोग होता था, सूजन के मामलों में (वेनेसेक्शन) (venesection) वेन को काट दिया जाता था। उनकी आत्मा ने उन्हें इस प्रकार के उपचार की अनुमति नहीं दी। उन्होंने उपचार तो छोड़ दिया परन्तु उन्हें अपना

परिवार भी चलाना था। अतः रोजी-रोटी कमाने के लिए उन्होंने कई पुस्तकों का अनुवाद शुरू कर दिया, मुख्यतः चिकित्सा और रसायन शास्त्र की, क्योंकि इन विषयों में उनकी रुचि थी। 1790 में क्यूलेन की मेटिरिया मेडिका (cullen's materia medica) का अनुवाद करते वक्त उन्हें सिनकोना की छाल के बारे में एक अनोखा कथन मिला कि वह बुखार (ague) का उपचार अपने कड़वे स्वाद एवं तीखेपन के कारण करती है। परन्तु हैनिमेनकी बुद्धि और समझ ने इस बात का विरोध किया और उन्होंने स्वयं जांच करने का निर्णय लिया। उन्होंने दिन में दो बार सिनकोना छाल के जूस की 4 ड्राम (Drachm) लेना आरंभ कर दिया। उन्हें इस बात ने अंचभित किया कि उन्हें भी मलेरिया जैसे लक्षणों ने प्रहार किया जैसे कि बुखार। इसके पश्चात उन्होंने अन्य दवाइयों के साथ भी इसी प्रकार प्रयोग किया, जिनकी उपचारिक प्रवृत्ति स्थापित हो चुकी थी। उन्होंने पाया कि वह पदार्थ जो रोग का उपचार करता है, अगर वही पदार्थ स्वस्थ मनुष्य को दिया जाता है, तो समान रोग की स्थिति उत्पन्न करता है, अतः पदार्थ की रोग उत्पन्न करने की प्रवृत्ति ही रोग का उपचार करने की शक्ति रखती है। 1796 में हैनिमेन ने एक ह्यूफलैण्ड पत्रिका (Hufeland's journal) में एक लेख प्रकाशित किया था जिसमें उसने अपने खोज के नतीजे प्रकाशित किये। इस लेख का नाम था "An essay on a new Principle to ascertain the curative powers of drugs and some examination of the previous principles" (ड्रग के उपचारिक शक्ति के नये सिद्धांत और पुराने सिद्धांतों की जांच पर एक निबंध)

मास्टर हैनिमेन ने इस बात पर महत्त्व दिया कि किसी पदार्थ के रोग उत्पन्न करने और उपचार करने की शक्ति को सुनिश्चित करने के प्रयासों को मनुष्यों पर ही करना चाहिए ना कि जानवरों पर क्योंकि जानवर न तो आत्मिक और न ही मानसिक लक्षणों को व्यक्त कर पाते हैं और एक ही पदार्थ के प्रभाव जानवर और मनुष्यों में भिन्न होते हैं। मास्टर हैनिमेन ने अपने प्रयोग सिर्फ स्वस्थ मानवों तक ही सीमित रखे थे क्योंकि एक स्वस्थ मनुष्य एकदम से पदार्थ द्वारा हुए छोटे से छोटे बदलाव को भी भांप लेता था और इसलिए भी कि रोगी व्यक्ति में उत्पन्न लक्षणों का एक पूर्ण चित्र नहीं देते थे, कुछ लक्षणों का उपचार हो जाता था और कुछ बढ़ जाते थे।

इस प्रकार, भिन्न उम्र, लिंग और बनावट वाले स्वस्थ मनुष्यों पर उन पदार्थों की उपचारिक और रोग उत्पन्न करने वाले पदार्थों की निश्चितता को स्थापित करने की विधि को ड्रग प्रमाणिकता कहते हैं। इसके लिए निरीक्षण की तीव्र क्षमता और विश्वास की आवश्यकता है। पहले मास्टर ने यह सारे प्रयोग अपने ऊपर किए और फिर अपने परिवार के सदस्यों पर और फिर रिश्तेदारों के ऊपर। बाद में, कुछ दोस्त, अनुयायी और अन्य विवेकी चिकित्सकों ने भी उनके इस कठिन काम में साथ दिया। 1805 में मास्टर ने लेटिन भाषा में लिखी एक पुस्तक में 27 ड्रग पदार्थ की प्रमाणिकता के बारे में लिखा : मास्टर ने ड्रग प्रमाणिकता जारी रखी और जल्दी ही 'मैटिरिया मेडिका प्यूरा' - Materia Medica Pura को प्रकाशित किया। सन् 1811 में इसके पहले संस्करण की पहली पुस्तक प्रकाशित हुई। पहली और दूसरी पुस्तक के तीसरे संस्करण 1830 में प्रकाशित हुए। मास्टर ने अपनी पुस्तक का नाम यही रखा, क्योंकि चिकित्सा के पुराने स्कूल के मैटिरिया मेडिका प्रकिल्पित अनुमान कार्य पर आधारित थे जिसके प्रयोग के कोई तार्किक

कारण नहीं थे। इस पुस्तक में 67 दवाइयों के लक्षण दिए गए थे। इस पुस्तक के छः भाग थे। इसमें शामिल थे– लक्षण, ड्रग प्रमाणिकता के नतीजे, आकस्मिक हानिकारक प्रभाव। इसमें निम्नलिखित दवाईयां शामिल हैं :

(1) एकोनाइटम नैप (Aconitum nap.)
(2) ऐम्ब्रा ग्रीसिआ (Ambra Grisea)
(3) ऐंगुसट्टुरा (Angustura)
(4) अर्जेंटम (Argentum)
(5) आर्निका मोनटेना (Arnica montana)
(6) आर्सेनिकम (Arsenicum)
(7) ऐसरम (Asarum)
(8) औरम (Aurum)
(9) बैलाडोना (Belladonna)
(10) बिस्मथम (Bismuthum)
(11) ब्रायोनिया एल्बा (Bryonia Alba)
(12) कैलकेरिया एसेटिका (Calcarea acetica)
(13) कैमफोरा (camphora)
(14) कैनेबिस सटाइवा (cannabis sativa)
(15) कैप्सिकम (capsicuman)
(16) कार्बो एनिमलिस (carbo animalis)
(17) कार्बो वेजिटेब्लिस (carbo vegetabilis)
(18) कैमोमिला (chamomilla)
(19) चैलिडोनियम (chelidonium)
(20) चाइना (china)
(21) सिकुटा वाइरोसा (cicuta virosa)
(22) सिना (cina)
(23) कोक्यूलस (cocculus)
(24) कोलोसिनथिस (colocynthis)
(25) कोनियम (conium)

(26) साइकलामेन यूरोपैकम (cyclamen europacum)

(27) डिजिटैलिस (Digitalis)

(28) ड्रोसेरा रोटैंडिफोलिया (Drosera Rotandifolia)

(29) डलकामारा (Dulcamara)

(30) यूफ्रेशिया आफिसिनैलिस (Euphrasia officinalis)

(31) फैरम (Ferrum)

(32) गुऐकम (Guaiacum)

(33) हैलीबोरस नाइगर (Helleborus niger)

(34) हीपर सल्फ्यूरिस कैलकेरियम (hepar sulphuris calcareium)

(35) हायोसिएमस नाइगर (Hyoscyamus niger)

(36) इगनेशिया (Ignatia)

(37) इपीकैकुऐना (Ipecacuanha)

(38) लीडम (Ledum)

(39) मैगनीस (Magnes)

(40) मैगनेटिस पोलस आर्कटिकस (magnetis polus arctecus)

(41) मैगनेटिस पोलस आस्ट्रेलिस (magnetis Polus Australis)

(42) मैंगेनम ऐसेटिकम (manganum aceticum)

(43) मेनिएन्थिस ट्राईफोलिएटा (menyanthes trifoliata)

(44) मरक्यूरियस (mercurius)

(45) मोसकस (moschus)

(46) म्यूरिएटिकम ऐसिडम (muriaticum acidum)

(47) नक्स वोमिका (nux vomica)

(48) ओलिएंडर (oleander)

(49) ओपियम (opuim)

(50) फौसफोरिकम एसिडम (phosphoricum acidum)

(51) पल्साटिला (pulsatilla)

(52) रिह्यम (Rheum)

(53) रह्स टोक्स (Rhus Tox)

(54) रूटा (Ruta)

(55) सैमब्यूकस (Sambucus)

(56) सरसापरिला (Sarsaparilla)

(57) सिला (Scilla)

(58) स्पाईजीलिया (Spigelia)

(59) स्पोंजिया (spongia)

(60) स्टैनम (stannum)

(61) स्टैफिसेग्रिआ (staphisagria)

(62) स्ट्रेमोनियम (stramonium)

(63) सल्फर (sulphur)

(64) टैरेक्सेकम (Taraxacum)

(65) थूजा (Thuja)

(66) वेरेट्रम एलबम (Veratrum album)

(67) वर्बासकम (Verbascum)

शुरुआत में ड्रग प्रमाणिकता के लिए मास्टर ने अपक्व ड्रग पदार्थ पर प्रयोग किए परन्तु बाद में शक्ति प्रदान करने (Potentisation) की विधि अपनाई, जिससे छिपी शक्ति का अति जागृत होना निश्चित हुआ। तब मास्टर ने अपने प्रयोग को क्षमता की 30वीं शक्ति को सफल पाया। § गद्यांश 105 से § 145 तक, आर्गेनान आफ मेडिसन के पांचवें और छठे संस्करण में ड्रग प्रमाणिकता के निर्देश दिए गये है।

1828 में मास्टर ने दीर्घस्थायी रोगों (chronic diseases) पर अपने विचार 'आर्गेनन' के चौथे संस्करण में प्रकट किए थे और साथ ही एक अलग से पुस्तक 'दीर्घस्थायी रोग, उनकी प्रकृति एवं उपचार' भी प्रकाशित की। अपनी पुस्तक में उन्होंने सैद्धांतिक विवरण दिए हैं और अंत में इसका नतीजा भी दिया है, साथ में ही कई एन्टीसोरिक (antipsoric) दवाईयों के लक्षणों का अध्ययन भी विस्तारपूर्वक लिखा है। उन्होंने 48 दवाईयों का विवरण दिया है जिसमें नैदानिक अनुभव भी शामिल है। कुछ ड्रग्स तो 'मेटिरिया मेडिका प्यूरा' से दुहरायी गई हैं परन्तु दीर्घस्थायी रोगों में प्यूरा, (Pura) की तुलना में लक्षणों की संख्या बढ़ गई है। प्यूरा (Pura) में मास्टर ने हर ड्रग का परिचय दिया है, जिसमें ड्रग के कुछ मुख्य लक्षण हैं, जिस प्रकार वह तैयार की गई है और प्रमाणिकता के लिए प्रयोग की गई है। परिचय थोड़ा बहुत बदला गया है या 'दीर्घस्थायी रोगों' के समान ही रखा गया है। मुख्य दवाइयां दोनों पुस्तकों में आती हैं :

(1) आर्सेनियम (Arsenium), (2) औरम (Aurum), (3) कार्बोएनिमेलिस (Carbo animalis), (4) कार्बो वेजिटेबलिस (Carbo vegetabilis), (5) कोलोसिंथिस (Colocynthis), (6) कोनियम मैक्यूलेटम (Conium maculatum), (7) डिजिटैलिस (digitalis), (8) डल्कामारा (dulcamara), (9) गुएकम (Guaacum), (10) हिपर सल्फ्युरिस कैलकेरियम (Hepar sulphuris Calcarium), (11) फासफोरिकम ऐसिडम (Phosphorecum acidum), (13) सरसापेरिला (Sarsaparilla), (14) स्टैनम (Stannum), (15) सल्फर (Sulphur)।

दीर्घस्थायी दवाइयों में निम्नलिखित दवाइयों का ज़िक्र किया गया है :

(1) अगेरिकस मसकेरियस (agaricus muscarius)

(2) एल्युमिना (alumina)

3) एमोनियम कार्बोनिकम (amnonium carbonicum)

(4) एमोनियम म्यूरिएटिकम (annonium muriaticum)

(5) एनाकार्डियम (anacardium)

(6) एंटिमोनियम क्रूडम (antimonium crudum)

(7) आर्सेनिकम एलबम (arsenicum album)

(8) औरम, गोल्ड (aurum, gold)

(9) औरम फेलिएटम (aurum falliatum)

(10) बैराइटा कार्बोनिका (Baryta carbonica)

(11) बोरेक्स वेनेटा (Borax veneta)

(12) कैलकेरिया कार्बोनिका(Calcarea carbonica)

(13) कार्बो एनिमेलिस(Carbo animalis)

(14) कार्बो वेजिटेबलिस (Carbo vegetabilis)

(15) कौस्टिकम (causticum)

(16) क्लेमेटिस इरैक्टा (clematis erecta)

(17) कोलोसिनथिस (colocynthis)

(18) कोनियम मैक्यूलेटम (conuim maculatun)

(19) क्यूप्रम (digitalis)

(20) डिजिटेलिस (digitalis)

(21) डलकामारा (dulcamara)

(22) यूफोर्बियम (euphorbium)

(23) ग्रेफाइटस (graphites)
(24) गुएकम (Guaiacum)
(25) हेपर सल्फ्युरिस कैलकेरियम (Hepar sulphuris calcareum)
(26) आयोडियम (iodium)
(27) काली कार्बोनिकम (Kali carbonicum)
(28) लायकोपोडियम (Lycopodium)
(29) मैगनेसिया कार्बोनिका (magnesia carbonica)
(30) मैगनेसिया म्यूरिएटिका (magnesia muriatica)
(31) मैंगेनम (manganum)
(32) मेज़ेरियम (mezerium)
(33) म्यूरिएटिकम एसिडम (muriaticum acidum)
(34) नैट्रम कार्बोनिकम (natrum carbonicum)
(35) नैट्रम म्यूरिएटिकम (natrum muriaticum)
(36) नेट्रम म्योर (natrum mur)
(37) नाइट्रिक एसिडम (nitric acidum)
(38) नाइट्रम (nitrum)
(39) पेट्रोलियम (Petroleum)
(40) फासफोरस (Phosphorous)
(41) फोसफोरिकम एसिडम (Phosphoricum acidum)
(42) प्लेटिना (Platina)
(43) सरसापरिला (sarsaparilla)
(44) सीपिआ (sepia)
(45) सिलिकिआ टेरा (silicea terra)
(46) स्टैनम (Stannum)
(47) सल्फर (Sulphur)
(48) सल्फ्यूरिकम एसिडम (Sulphuricum acidum)
(49) ज़िंकम (Zincum)

मास्टर हैनिमेन ने स्वयं ही अपने जीवनकाल में 99 दवाइयों की प्रमाणिकता सिद्ध की थी और 100वीं दवाई पर कार्य कर करते समय जुलाई 1843 में उनकी मृत्यु हो गई थी। अन्य कई बड़े चिकित्सकों ने ड्रग्स की प्रमाणिकता स्वयं ही सिद्ध की है जैसे डा. हेरिंग (Dr. Hering) ने हमें

लेकेसिस (lachesis) और क्रोटेलस होरिडस (crotalus horridus) आदि दिए। डा. स्टाफ (Dr. Staff) ने क्रोकस सटाईवा (crocus sativa), कोलचीकम (Colchicum) आदि, डा. बर्ट (Dr. Burt) तथा डा. स्मिथ (Dr. Smith) ने इक्युसेटम (equisetun) आदि दिया और इस प्रकार सूची में अनगिनत नाम हैं।

इस प्रकार होम्योपैथिक मैटेरिया मेडिका बनी और अभी भी नए नाम जुड़े जा रहे हैं क्योंकि यह प्रकृति के निश्चित नियमों सटीक निरीक्षण, सही व्याख्या और उपयुक्त नतीजों पर आधारित है, अतः यह बदल नहीं सकता और इसी प्रकार स्थिर रहेगा। एलोपैथिक दवाइयों के अंश और सूत्र बदलते रहते हैं नए निदानों पर निर्भर करते हैं, परन्तु होम्योपैथिक दवाइयां हमेशा के लिए एकसमान रहती हैं।

कुछ चिकित्सकों ने मुख्य विचार (key notes) को याद करने की विधि अपनायी है क्योंकि सौ और हज़ार लक्षणों को पूरा (Pura) जैसी पुस्तकों से याद करना असंभव है। इन चिकित्सकों में नेतृत्व करने वाले थे, डा. एच.एन.जी. ग्युरेनसी (H.N.G. Guerensy), डा. एच.सी. एलेन (Dr.H.C.Allen), डा. नैश (Dr.Nash), डा. पुलफोर्ड (Dr. Pullford) आदि। मुख्य विचार में वे लक्षण दिए गए हैं जिनके बिना ड्रग को पहचाना नहीं जा सकता या वे लक्षण जो उस ड्रग के निजी लक्षण होते हैं। यह धारणा 'आर्गेनोन आफ मेडिसिन' के पांचवें और छठे संस्करण के §153 के अनुकूल है जिसमें मास्टर ने उल्लेख किया है कि वही दवाई को किसी केस के लिए चुना जाए जिसके रोग के लाक्षणिक रूप उसके लक्षणों के अनुरूप हों। यह लक्षण बहुत ही स्पष्ट, एकाकी, असामान्य और अनोखे होने चाहिए।

कुछ अन्य चिकित्सक जैसे डा. ई.ए.फैरिंगटन (Dr.E.A. Farrington), डा. एम..एल.टायलर (Dr. M.L. Tyler), डा. केन्ट (Dr. Kent) आदि ने मैटिरिया मेडिका को याद करने के लिए और समझाने के लिए चित्ररूप को वरीयता प्रदान की है। अर्थात् उन्होंने हर दवाई को निजी व्यक्तित्व मानकर उसके बारे में लिखा है। इस प्रकार हैनिमेन के प्राचीन साहित्य के पश्चात मैटीरिया मेडिका के विभिन्न रूप उभर कर आए हैं।

मेटीरिया मेडिका की उपयुक्ता हर ड्रग के लक्षणों के योग या सम्पूर्ण लक्षणों को जानने में निर्भर करती है। यह लक्षण रोगी व्यक्ति के सम्पूर्ण लक्षणों से मेल खाते होने चाहिए, जिससे कि व्यक्ति का उपचार जल्दी, शान्ति से और स्थायी रूप में हो सके।

पाठगत प्रश्न

1. मेडिसन और होम्योपैथी के जन्मदाता कौन हैं ?

2. एम. डी. डिग्री प्राप्त करने के पश्चात, हैनिमेन ने पुराने विचारों की चिकित्सा पद्धति के अभ्यास को क्यों छोड़ दिया।

3. हैनिमेन की प्रमाणिकता किस भाषा में प्रकाशित हुईं थी ?

4. मेटिरिया मेडिका पुरा (Materia Medica Pura) के पहले संस्करण की पहली पुस्तक किस वर्ष में प्रकाशित हुई थी ?

5. दवाईयों की कुल कितनी संख्या :

(क) मेटिरिया मेडिकपूरा में शामिल हैं।

(ख) 'दीर्घस्थायी रोग -- रूप और उपचार' में शामिल हैं।

(ग) अपने जीवनकाल में हैनिमेन द्वारा प्रमाणित हैं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1. मेडिसन के जन्मदाता हिप्पोक्रेटस और होम्योपैथी के जन्मदाता मास्टर हैनिमैन हैं।

2. हैनिमेन ने पुरानी विचारधारा पर आधारित चिकित्सा का अभ्यास इसलिए छोड़ दिया था क्योंकि :-

(क) उनका उपचार किसी स्थायी नियम पर आधारित नहीं था।

(ख) उपचार केवल प्रभावी हिस्से/अंग को ठीक करने के लिए दिया जाता था।

(ग) विभिन्न प्रकार के उपचारों से वह घृणा करने लगे थे ।

3. लेटिन भाषा

4. 1811 में

5. (क) 67

(ख) 48

(ग) 99